श्री श्री 108
''बाबा परमहंसजी कलना-बाबा''

एक अवतार

''सुनि आचरज करै जनि कोई''

लेखक/सेवक

मोहन झा

श्री श्री 108

“बाबा परमहंसजी कलना-बाबा”

— एक अवतार —

“सुनि आचरज करै जनि कोई”

लेखक / सेवक

मोहन झा

ग्राम : नारायणपट्टी, पत्रालय : राजनगर

जिला : मधुबनी (बिहार)

दूरभाष : 06276-240724

पुस्तक – ''सुनि आचरज करै जनि कोई''

लेखक – **मोहन झा**

प्रकाशक – **गिरिजा पब्लिसिंग हाउस**
कल्याणेश्वरस्थान, कलना, मधुबनी (बिहार)

मुख्य वितरक– **गिरिजा बुक डिपो**
चन्द्रलोक चौक, मुजफ्फरपुर (बिहार)

आवरण – सुशील कुमार मिश्र

मुद्रक – माँ मिथिला प्रिंटर्स एण्ड पब्लिसर्स
भिखना पहाड़ी, धरहाड़ा कोठी, पटना-4
मोबाईल : 9835456370

प्रकाशन वर्ष – फरबरी 2007

प्रथम संस्करण : 2000 (दो हजार मात्र)

सहयोग राशि – 51.00 (एक्यावन रुपये मात्र)

जय गिरिजा महारानी
नमो भगवते बाबा श्री परमहंसाय् नमः

त्वदीयम् वस्तु गोविन्द् तुभ्यमेव समर्पितम्।
गृहाण सुमुखो भूत्वा प्रसीद पुरूषोत्तम्॥

(हे गोविन्द! आपही की यह वस्तु आप को समर्पित है। सुमुख होकर इसे ग्रहण करते, हे पुरूषोत्तम! आप प्रसन्न होवें।)

बाबा परमहंस जी के श्रीचरणों में समर्पित।

-: मुख्य बितरक :-

गिरिजा बुक डिपोट, चन्द्रलोक चौक, मुजफ्फरपुर

-: पुस्तक प्राप्ति स्थान :-

1. बाबा परमहंसजी आश्रम, कलना धाम
2. झा निवास, बस स्टैंड, बासोपट्टी, मधुबनी
3. गिरिजा पुस्तक भंडार, शंकर चौक, मधुबनी
4. गिरिजा इलेक्ट्रो होमियो सेवा, पोस्ट ऑफिस रोड, मधुबनी
5. गिरिजा ग्रंथालय, मेहसौल चौक, सीतामढ़ी
6. गिरिजा बुक डिपो, चन्द्रलोक चौक, मुजफ्फरपुर
7. गिरिजा कल्याणेश्वर, स्टेशन रोड, भागलपुर
8. गिरिजा सदन, नारायणपट्टी, राजनगर, मधुबनी
9. रामपुर (कुआ) जनकपुरधाम
10. श्री गिरिजा वस्त्रालय 'मदनबाबू का' बासोपट्टी
11. श्री चन्दिका ठाकुर (मुखिया जी)–जनकपुरधाम

प्रिय पाठकों, भक्तों के दर्शनार्थ, अवलोकनार्थ, ग्रंथ-बाबा का 'हस्ताक्षर' प्रस्तुत किया जा रहा है. बाबा का हस्ताक्षर दुर्लभ रहा- प्रस्तुत दर्शनीय है।
(लेखक)

कल्याणेश्वर (स्थान)
१५/४/७४

श्री श्री १०८ श्री बाबा परम हंस जी

कलना [illegible] जो कलना पोखर
के ग्राम बैंक में आ रहे रहता है पोखरा।
में वर्षियों में खुदाय जाय और वर्षा के
दिन [illegible] आगेला से मिट्टी [illegible]
के लोग [illegible] से काम करे
एक आदेश है देव।
कलना स्थान में [illegible] होवे
साधु के [illegible] मांगता।
[illegible]

प्रकाशक की ओर से . . .

शिकागो के विश्व-मंच से स्वामी श्री विवेकानन्द द्वारा किया गया यह उद्घोष आज के परिदृश्य में अत्यंत ही प्रासंगिक अनुभूत हो रहा है कि "पूरी धरती को आध्यात्मिक विचारों से पाट दो"।

आर्यावर्त्त की यह धरती सदैव ही त्यागी, तपस्वी, योगी, ऋषि, मुनि एवं महात्माओं द्वारा रक्षित-संरक्षित रही है। इस देश को-इसके वासियों को, इसकी मान्यताओं, प्रतिबद्धताओं एवं प्राथमिकताओं को भी-बिना इसके अध्यात्म को जाने नहीं समझा जा सकता है। क्षेत्रीय प्रभाव के संतों, साधकों, की भी यहाँ कभी कमी नहीं रही है। सिर्फ कट्टरता एवं धर्मांधता के कारण ऐसा होता आ रहा है कि एक परंपरा के अनुयायी दूसरे को वर्दास्त नहीं कर पाते जो सामाजिक समन्वय एवं राष्ट्रीय अखंडता के लिए बाधक एवं घातक सिद्ध होता आ रहा है।

हर समय की माँग रहती है कि उच्चतर-हितों में आनेवाले कल के लिए उसके बीते हुए 'कल' का सम्यक् विवरण, संयोग कर रख दिया जाय जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी के लिए अनमोल धरोहर बन जाता है।

इसी भाव से, संतो, महात्माओं, साधकों के प्रति श्रद्धानवत्, नत्-मस्तक रहते गिरिजा पब्लिसिंग हाउस चिंतनशील एवं प्रयासरत् रहा कि प्रकाशन माध्यम क्षेत्रीय-प्रभाव के भिन्न-2 संतों-तपस्वियों के जीवन-चरित, उनके संदेश को प्रकाश में लाया जाय। ऐसे ही में, ब्रह्मलीन १०८ श्री श्री परमहंसजी "कलना-बाबा" के जीवन-चरित को क्रम-वार, भिन्न-2 खेपों में, जनकल्याणार्थ उसे प्रकाशित रूप देने की विनम्र एवं विनीत चेष्टा की गई है। इसे किसी भी तरह पूर्ण तो नहीं ही माना जा सकता है परंतु भविष्य में काम करनेवाले शोधार्थियों के लिए-नई पौध के भक्तों, जिज्ञासुओं के लिए-इससे शुरूआती आधार तो जरूर ही मिलेगा।

"अंतर्राष्ट्रीय शोध एवं समन्वय मिशन" के तहत् लिखित शोध-परक प्रस्तुत पुस्तक के रचनाकार श्री मोहन झाजी की कार्यशीलता एवं तन्मयता "गुरू-प्रसाद" (कलना-बाबा) एवं कतिपय दैवीय गुणों से युक्त प्रतीत होता है। लेखक के क्राँतिशील विचार, विवेकशील बुद्धि, तथा सामाजिक एवं आध्यात्मिक चेतना का सद्य: दर्शन इस पुस्तक में समाविष्ट है।

विदेह की भूमि, सीता की जन्म-भूमि एवं मिथिला की कर्मभूमि की परिसीमा में अवस्थित बाबा कल्याणेश्वरनाथ महादेव एवं गिरिजा महारानी के उद्‌कूल बाबा परमहंसजी ''कलना-बाबा'' के अद्‌भुत रहस्यों एवं विस्मयकारी कृत्यों को अपनी लेखनी से उजागर करके लेखक नें अपने जीवन को सुफल बना दिया है। श्रद्धा-विश्वास की भाव-भूमि से उगी यह पुस्तक उसी महादेव (कलना-बाबा) का विकिरण है।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक ने जिस सहज भाव व गहन-मन से बाबा की प्रकृत्ति, प्रवृत्ति एवं निवृत्ति का अप्रतिम आख्यान किया है, अतुलनीय है। पुस्तक में जिन भावों, कृत्यों एवं झाँकियों का दिग्दर्शन है वह बौद्धिक कलात्मकता का संयोग कम परंच अनहद की उत्कर्षता का प्रतिफल अधिक जान पड़ता है।

सद्‌गुरू की कृपा जब अपने लाड़ले एवं दुलारे भक्त पर होती है तो उसकी **''गति एवं मति''** ऐसी ही हो जाती है जैसे प्रिय लेखक श्री मोहन झाजी ने अपने स्वात्मार्थ गुरू-अर्जित ऊर्जा को समस्त गुरू-भाईयों एवं समस्त भाव-प्रवण शिव-भक्तों में वितरित एवं विकिरित करने का सौभाग्य-लाभ लिया है।

अस्तु , ''ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति''

गुरू द्वारा प्रदत्त ''गुरू-प्रसाद'' को उन्हीं के द्वारा ग्रहण करना गुरू-कृपा की ही परिणति है। दिगम्बर के मूल-स्वरूप में बाबा परमहंसजी कलना-बाबा का संदेश है-

योग-जतन से नर-तन पायो, वेच न माँटी मोल
रे मन ! अनहद के नद बोल

भजन की भाषा अपनी होती है। भाव की समतावाले इसके आग्रही होते ही हैं। जिनके लिए यह चीज होती, जिनका यह विषय रहता, उन्हें कुछ भी तीता नहीं लगता, खोटा नहीं लगता है। इसमें अपने ईष्ट, आराध्य के माहात्म्य की प्रतिपाद्‌यता रहने के कारण सव मीठा-ही-मीठा लगता है। रूचता और पचता भी है।

इसी विश्वास के साथ ''गिरिजा पब्लिसिंग हाउस'' सादर-सप्रेम यह पुस्तक ''बाबा परमहंसजी- कलना-बाबा''- ''सुनिआचरज करै जनि कोई'' भक्तों की, जिज्ञासुओं की सेवा में सादर,सप्रेम प्रस्तुत कर रहा है।

गिरिजा पब्लिसिंग हाउस

जय गिरिजा महारानी

रामायण आध्यात्मिक मिशन
गिरिजा सदन, नारायणपट्टी

आज भैरवाष्टमी है और आज ही की यह पावन तिथि बाबा परमहंसजी ''कलना-बाबा'' का भी जन्मदिन है। आज ही के दिन भैरवाष्टमी को गोपालगंज जिला के भोरे थानान्तर्गत अग्रहण अष्टमी दिन बुधवार को अमही ग्राम में महाप्रभु परमहंस बाबा का अवतरण 1901 ई० में हुआ था। अमही ग्राम के जिस भू-खंड पर पूज्य-श्री का अवतरण हुआ था उस क्षेत्र को अमही ग्राम के ''छथियावाँ'' नाम से जाना जाता है।

प्रातःस्मरणीय जन-जन के आराध्य बाबा परमहंसजी अपने सेवकों, भक्तों, आश्रितों एवं अनुरागियों के घर-घर में, उनकी जगहों-जगहों पर आज के दिन विशेष रूप से पूजे जाते हैं, भजे जाते हैं। बाबा जब स्वयं स-शरीर थे तभी से यह दिन उनकी ''जयन्ती'' के रूप में भक्ति-भाव, आनंद और उल्लास के साथ जगह-जगह, कोने-कोने में मनाया जाता रहा है।

बाबा ने आराधना और उपासना के विषय में स्वयं जिन्हें अपने को जनाने की कृपा की वे ही उन्हें जान सके, जिन्हें उन्होंने वो अंत-र्दृष्टि देने की कृपा की वे ही उन्हें देख सके। न इसमें कोई प्रवचन सहायक हुआ न हीं कहीं का कोई अध्ययन या विश्लेषण और न किसी की सहायता या पैरवी। जो जानने योग्य हुआ वह तो अनिर्वचनीय ही था। बोलना-व्यक्त करना-खोना था, पाना नहीं। किसी भी तरह के प्रचार-प्रसार, प्रेषण-संप्रेषण को प्रोत्साहन नहीं मिला। आज भी जितने ही पूजा बाबा के कृपा-लाभ से सिंचित, अनुप्राणित हुए यहाँ-वहाँ, इस राज्य उस राज्य में उनके आश्रित कृपानुरागी हैं वे किसी भी तरह के प्रचार-प्रसार की जरूरत नहीं समझते और न ही इस तरह के प्रयासों को प्रोत्साहन, संवर्द्धन देना ही उन्हें अपने लिए आवश्यक जँचा। यही कारण है कि आज तक बाबा की जीवन लीला पर आधारित कोई प्रामाणिक पुस्तक हमारे बीच उपलब्ध नहीं है।

परंतु बाबा के महा-प्रयाण के बाद जगह-जगह लोगों के अनुभव कुछ ऐसे बनते आए हैं कि लोगों ने इस बात की आवश्यकता महसूस करना और इसे व्यक्त भी करना शुरू कर दिया है कि पूज्य बाबा की संपूर्ण जीवन-लीला पर आधारित उसका एक क्रम-बद्ध,

प्रामाणिक-विवरण, पुस्तक के रूप में हमारे बीच उपलब्ध हो-यह आवश्यक है।

ब्रह्मर्षि ब्रह्मलीन बाबा परमहंसजी महाराज क्या थे, क्या नहीं थे-इस पर कोई विश्लेषण देने, किसी तरह का प्रकाश देने, तत्त्व विषयक उनसे संबंधित किसी भी पहलू को प्रस्तुत करने के लायक मैं अपने को कतई समझूँ यह मेरा दुःस्साहस होगा, धृष्टता होगी। "शारदा शेष सके नहिं गाई परमहंस की तेज बड़ाई"।

कलनाधाम में बाबा के सान्निध्य में वास किए बन्धुओं को यदा-कदा सुनने का अवसर मिला ही होगा कि बाबा कहते थे देवता से ढिठै न करे के चाही"।

बाबा परमहंसजी प्रभु कलनाबाबा के संबंध में तत्व विषयक कुछ भी लिख सकने, बोल सकने के लायक मैं अपने को मानूँ-ऐसा कभी संभव ही नहीं है। मुझे अपनी सीमाओं का ख्याल है। मुझे सत्संग, शास्त्र, वेद-उपनिषद् आदि से प्रायः भेंट भी नहीं है। दूसरी तरफ देख रहा हूँ योगीराज बाबा की परिक्रमा करते एक-से-एक सिद्ध, साधक, विद्वान, मनस्वी, सर्व-साधन-समर्थ पुरूष यत्र-तत्र विराजमान हैं। मिथिलांचल के साधक-साधिकाओं के तो बाबा आराध्य हैं, आदर्श हैं। जो कलना नहीं आते-जाते उनमें एक-से-एक

ऐसे-ऐसे भक्ति-भाव पोषते बाबा से सद्प्रेरणा ले रहे हैं-कहा नहीं जा सकता है। कहीं, किसी रूप में साधनानिष्ठ कोई भी क्यों न हों, सबों का साध्य तो एक ही है। उनके लिए भिन्न-भिन्न धामों में, भिन्न-भिन्न आदर्शों में कोई अंतर नहीं है। इन सबके बीच मेरे ऐसा, सर्वप्रकारेण न्यूण स्तर एवं क्षुद्र-हीन प्रभृति का व्यक्ति पूज्य-बाबा विषय पर कुछ लिखे यह धृष्टता है, ढ़िठै होगी।

"ऐ बौने तू चाँद न छूओ, पक जाओगे।"

किसी ने बाबा को इस तरह जाना कि "महावीर अवतार तिहारा, सहि दु:ख आपहि करे उधारा" तो किसी ने ऐसा अनुभव किया कि "आशुतोष धरि सगुनहिं वेषा, तजि कैलाश बसे एहि देसा।" किसी ने देखा कि "तुम गिरिजा के सेवक, शिव के चाकर हो" तो किसी ने कहा "कर्त्ता, भर्त्ता, हर्त्ता, दाता, दीनटरे", फिर "राम-कृष्ण हो तुम्हीं"।

अब इसमें कौन यह कहे कि बाबा किनके लिए क्या थे। वो कहें जो साधु-संत, हंस-परमहंस, शिव-शिवअंश, देव-महादेव आदि के बीच का अंतर जानते हो, उन्हें देखने, परखने, समझने और समझाने की भगवद्शक्ति जिन्हें प्राप्त हो, जिन्हें इस हेतु भगवद्-कृपा मिली हो।

मैं तो बाबा परमहंसजी का कृपा सान्निध्य मात्र पा सका। आर्त्त, कामनार्थी, चंचल-चित्त, सब तरह से दीन-हीन-क्षीण की मनोदशा में हमारा जो भी समय बीता परंतु उनकी कृपा से नियमित सान्निध्य मिलता गया। नियमितता जिस प्रभृति की भी स्थिरता देती है वह स्थिरता अपने आप में एक दृष्टि भी देती है। फिर वह दृष्टि भी तो अपने संस्कार एवं अपनी पृष्ठभूमि के अनुकूल ही बनती है। तथापि अनुभव सबके अपने-अपने ही होते हैं, दृष्टि भी तो सबकी अपनी-अपनी ही होती है।

बाबा परमहंसजी महाराज की संपूर्ण जीवन-लीला पर आधारित उसका एक क्रमबध एवं सांगोपांग अध्ययन विवरण पुस्तकाकार प्रस्तुत किया जा सके, इसके लिए योग्य, सक्षम एवं समर्थ लोगों की जरूरत है।

मैं तो इस छोटी सी पुस्तिका के माध्यम उस "बाल-ब्रह्मचारी तू संता, तू अनंत तब कथा अनंता" योगीराज ब्रह्मलीन-ब्रह्मर्षि की लीला-चर्चा के अंशांश, सतांश, सहश्रांश तक भी अपनी छू, अपनी पहुँच, नहीं बना सका। तब 'कथा-गायन' भी अपने आप में एक अवलंब है। "अवलंब भवंत कथा जिन्हकें" उनके लिए तो इससे प्रिय, रोचक और प्रेरक कुछ और है ही नहीं। "प्रथम भगति संतन्ह

कर संगा, दूसरि रति मम कथा प्रसंगा'' पुनः ''चौथि भगति मम गुण-गण, करई कपट तजि गान''। जिन्हें बाबा परमहंसजी की महिमा चर्चा से प्रीति है और जो उनके कथा-बखान सुनने से थकते नहीं, उन्हें सुनने के लिए आतुर-ललायित रहते हैं, उन्हें इससे कुछ भी तो मिलेगा।

बस, इतना भी यदि हो सका तो मैं इस तुच्छ-पुस्तिका के निर्माण एवं प्रकाशन में हुए परिश्रम को सार्थक समझूँगा।

बस, अपने एवं अन्यान्यों के कुछ संस्मरणों को, कथा-रूप में, प्रस्तुत किया जा रहा है। पन्द्रह से ऊपर ऐसी कथाएँ हैं। फिर पूज्यबाबा के कलना आकर स्थिर होने से पहले की कलना की प्राकृतिक दशा के चित्रण के साथ-साथ कलना-परिसर, बाबा परमहंसजी आश्रम में 'वास' करनेवाले अथवा आते-जाते दर्शनार्थियों के मार्गदर्शन हेतु कलना-परिसर में प्रवेश करने के साथ परिसर में रहने, वहाँ समय बीताने हेतु प्रारंभिक काल से बाबा द्वारा दिए गए आदेशों, संकेतों, उपदेशों का भी एक विहंगम-विवरण प्रस्तुत किया गया है जो आज तक अक्षुण्ण कलना की आचरण संहिता के रूप में भक्तों, दर्शनार्थियों द्वारा पालित-अनुपालित हो रहा है। पुस्तिका के एक भाग में पुनः पूज्यबाबा के जन्मस्थान अमही से लेकर कलना

आकर उनके केन्द्रित होने तक की अवधि का जो भी उल्लेख, चर्चा मान्य एवं प्रामाणिक मिला, जँचा, उसे भी प्रस्तुत किया गया है। सारे कथारूपक हैं। बाबा की कुछेक दिव्य वाणियों का भी विश्लेषण प्रस्तुत है। साथ में बाबा के शुक्ल वंश की वंशावली भी प्रस्तुत है।

बस, इतना आपके जितने उपयोग, आपकी जितनी रूचि, आपकी जितनी सेवा की सिद्ध हो सके। अमही से कलना तक की अवधि से संबंधित दो-तीन चर्चाओं पर मतैक्य नहीं प्राप्त हो सका तथापि जो भी मुझे विश्वसनीय एवं प्रामाणिक सा जँचा, उसका उल्लेख किया गया है।

आज के कलना की स्थिति, इसके हुए एवं चालू विभिन्न विकास-कार्यों की चर्चा के साथ वर्तमान कलना के बदलते स्वरूप की चर्चा का स्पर्श भी नहीं हो सका है।

किसी तरह बाबा परमहंसजी के सेवकों, समानधर्मी भाईयों, माताओं, बहनों को बाबा संबंधी कुछ रोचक, प्रेरक कथाएँ तो मिलेगी। जन्म-काल से लेकर कलना में उनके महाप्रयाण तक का बाबा के उनके अपने संस्मरणों के साथ-साथ उनकी दिव्य-वाणियों का आंशिक संकलन भी तो पुस्तक माध्यम प्राप्य है। अमही से लेकर कलना तक की कुछ अचरजकारी सत्य कथाएँ तो हैं। हमारे सक्षम

एवं समर्थ बन्धुओं को और ही सुधरे हुए ढ़ंग के उन्नत एवं उच्चतर स्तर के प्रकाशन के माध्यम सेवा की प्रेरणा तो मिलेगी। पूज्य बाबा को समर्पित प्रकाशन-आन्दोलन की कड़ी में कम-से-कम इतने उपयोग की भी यदि यह पुस्तिका सिद्ध हुई, तो मैं अपने को धन्य समझूँगा।

अंत में, पुनरावृत्ति-दोष सहित सभी तरह की त्रुटियों से भरपूर इस पुस्तिका की समग्र त्रुटियों के लिए बार-बार क्षमा-याचना करते हुए पाठकों से एक ही अनुरोध है कि एक-बार, आदि से अंत तक पुस्तक के अवलोकन करने की कृपा आप जरूर करेंगें।

जय गिरिजा महारानी,

जय बाबा परमहंसजी।

***

बाबा परमहंसजी और हनुमान-चालीसा

बाबा परमहंसजी की कथा-चर्चा के क्रम में ''हनुमान-चालीसा'', हनुमान-चालीसा माहात्म्य के वर्णन का अछूता रह जाना तो संभव ही नहीं है। कभी भी, कोई भी, नई बात कहाँ बाबा ने कही। सनातन महत्व के, विश्वास के, जो-जो पहलू हमसे, आपसे, कालक्रम में अनदेखे, अछूते रहते गये बस उन्हीं के प्रति अपनी कृपादृष्टि देकर हममें सचेतनता, हममें परतीति, जागृत करने के माध्यम नैसर्गिक महत्व की जीवन-चर्या दर्शाते भगवद् कृपा हेतु विश्वास के मार्ग पर लोगों को पूज्य बाबा ने दिशोन्मुख किया।

जहाँ तक बाबा परमहंसजी कलना-बाबा के संदर्भ में 'हनुमान-चालीसा' पाठ करने के उनके उपदेश की बात है यह तो लगता है-बस किसी सिक्के के दोनों पहलू के ही ऐसा। यदि सिक्के के एक तरफ बाबा परमहंसजी की मूर्त्ति दे दें और दूसरे भाग हनुमान-चालीसा की स्वस्तिक तो एकदम यह उपयुक्त होगा। ''राम'' नाम और हनुमान-चालीसा पाठ।

तुलसीदास का "हनुमान-चालीस" तो घर-घर के बच्चे-वृद्ध, महिला-पुरूष सबकी जिह्वा पर रहता आ रहा है। कोई यह सिर्फ बाबा परमहंसजी के काल से शुरू हुआ ऐसी बात तो नहीं है। परंतु हनुमान-चालीसा पाठ के आश्रय के लाभ का जो चमत्कारी-परिचय बाबा परमहंसजी के उपदेश के माध्यम मिला, वह प्राय: अनिर्वचनीय है।

जैसे तुलसीदासजी ने कहा है कि "जो यह पढ़ै हनुमान-चालीसा होय सिद्धि साखी गौरीशा" वैसे ही पूज्यबाबा परमहंसजी के उपदेश माध्यम हनुमान-चालीसा के पाठ के सेवन करनेवालों के अनुभव साक्षी हैं कि निराश, निरावलंब के सब तरह से हनुमान जी रक्षक, सहायक हैं। "अष्ट-सिद्धि नव निधि के दाता" कोई भी बाबा परमहंसजी के आश्रित, सेवक ऐसे नहीं होंगे जिन्हें बाबा परमहंसजी के उपदेशानुकूल "हनुमान-चालीसा" पाठ के चामत्कारिक प्रभाव का निजी अनुभव नहीं हो। फिर भी, चूँकि यह पुस्तिका एक "कथा-गुच्छ" है इसलिए हनुमान-चालीसा संबंधी एक दो संस्मरण प्रस्तुत हैं जो पूर्व में भी एक दो प्रकाशन के माध्यम प्रकाश में आ चुके हैं। सीतामढ़ी सुरसंड के नजदीक के रामनरेश ठाकुर जी का यह संस्मरण एक जगह और ही उल्लिखित है। रामनरेशजी की भाभी का देहांत हो गया था। उनके शव को लेकर श्मसान घाट लोग ले गये।

बहुत जोड़ों का मेघ था। भयंकर वर्षा सन्निकट थी। लोगों को शव छोड़कर भागना पड़ता। रामनरेश जी ने बाबा का सुमिरन किया। अन्यान्य लोगों की मनोदशा देखते और अपने निजी संकट से विह्वल रामनरेश जी ने हनुमान-चालीसा का पाठ शुरू कर दिया। कौन विश्वास करेगा? रामनरेश जी अकेले नहीं थे। सबों ने देखा। चारों तरफ मुसलाधार वर्षा हुई, देर तक हुई परंतु स्मशान स्थल एकदम वर्षा से वंचित रह गया। लोगों ने चिता जलाई, पूरा समय देकर संपूर्ण संस्कार कार्य किए।

जब रामनरेश जी अगली बार बाबा के दर्शनार्थ कलना आये तो बाबा ने ही पूछ दिया "की हो। की कहलऽ त वर्षा रूक गेल" रामनरेश जी ने बाबा के चरण, पैड़, पकड़ते कहा "बाबा। हनुमान-चालीसा पाठ किए" बाबा के अपने आप पूछ देने का प्राय: यही भाव था कि रामनरेश जी के माध्यम हनुमान-चालीसा का माहात्म्य औरों को सुनने हेतु मिले, ज्ञान हो- प्रेरणा मिले

कोई भी कलना बाबा के भक्त नहीं होंगे जिनका अपना संस्मरण हनुमान-चालीसा-महिमा संबंधी नहीं होगा। "बाढ़ई कथा पार नहिं लगेऊ"। स्थानाभाव के कारण संभव नहीं है कि विशेष को चर्चा में प्रस्तुत किया जाय तथापि बनारस के बबलू दादा का भीएक संस्मरण प्रस्तुत कर दिया जाय।

"बबलूदा" की बेटी "तूली" बिमार थी। चिकित्सा चल

रही थी। चिकित्सक लोग निराश हो गए थे। ज्वर बढ़ता इतनी डिग्री पर पहुँच गया कि उनकी तूली आँखें सदा के लिए बंद करती सी दिखने लगी। सारे उपचार, सारी प्रार्थना से थक ''बबलू'' ने बस अब अंतिम बार के लिए हनुमान जी से उनका हनुमान चालीसा पाठ करते अपनी तूली की जान के लिए भीख की अंतिम गुहार लगायी। यह अंतिम आश्रय था, अंतिम प्रयोग था। बबलू की आँखें बंद थी, हनुमान चालीसा पाठ चल रहा था। कुछ देर बाद तूली ने आँखें खोली, मम्मी-पप्पा करके आवाज लगाई। उनकी पत्नी ने बबलू का ध्यान आकृष्ट करते चिल्लाते आवाज दी ''लौट आइ मेरी तूली, बच गई मेरी तूली, तूली बोल रही है।''

'बबलू दा' पाठ करते रहे। उनकी तूली बच गई। सब दवा बन्द करा दी गई। बाबा की, हनुमान चालीसा की दुहाई देते परिवार धन्य-धन्य रहने लगा।

इस तरह तो हनुमान-चालीसा के माहात्म्य या बाबा के उपदेश के अनुकूल हनुमान-चालीसा के सेवन से प्राप्त जन-जन के संस्मरण को प्रस्तुत करना संभव नहीं है।

बस, यथा-संभव कथा-संस्मरणों के एक गुच्छ-सहित यह तुच्छ सेवा भक्तों के मन-रंजन हेतु की जा रही है। इसमें हनुमान-चालीसा के माहात्म्य की चर्चा नहीं किया जाना विचित्र तरह की रिक्तता ला देता। अस्तु।

* * *

''ठाकुर शुक्ल प्रयाग-सुत, अमहीं जनम तुम्हार''

सभी स्तर से इस बात की आवश्यकता महसूस की जाती रही है कि जन्म स्थान अमही से लेकर ''प्रयाग-सुत ठाकुर शुल्क'' बाबा परमहंस के कलना धाम में उनके महाप्रयाण तक का एक क्रमबद्ध अध्ययन उपलब्ध हो सके। इस दिशा में किंचित् ही लेकिन संभव हर चेष्टा मैंने भी अपने स्तर से की।

1992 में पूज्य प्रातः स्मरणीय बाबा के महाप्रयाण के बाद जनकपुर से प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका परमहंस प्रभा के प्रकाशन के अनियमित हो जाने के बाद, कोई ऐसा माध्यम सामने नहीं आ सका है जो कि आम जिज्ञासु, खोजी मानसिकता के लोगों की बौद्धिक तुष्टि एवं आध्यात्मिक तृप्ति का साधन बन सके।

पूज्य बाबा स्वयं अपने मुखारविंद से कुछ खास जनों को अपने जन्म-स्थान संबंधी, अपने साथ समय-समय पर घटित विभिन्न घटनाओं का कथा-रूपक विवरण सुनाया करते थे। रात में अपने साथ रख-रखकर बहुतों को बहुत तरह की जानकारी दी थी जिसमें

बहुत आज हमारे बीच रह नहीं गए हैं। कुछ हैं जिनसे मौखिक कुछ-कुछ जन्म-स्थान अमही से कलना तक की बाबा की यात्रा के क्रम की मात्र कुछेक बातें जानने योग्य होती हैं। कथा रूपक घटनाएँ परंतु सभी मुँह से एक ही बात इसलिए इन्हें प्रामाणिक माना जा सकता है। पुनः ये पूज्य बाबा के जीवन-काल में छिट-फुट रूप में किसी किसी माध्यम प्रकाशित भी हुए। अतः इनकी प्रामाणिकता के संबंध में कहीं प्रश्न ही नहीं उठता।

जन्म-स्थान अमही से आकर कलना स्थिर होने तक मिथिला-क्षेत्र में उनके पदार्पण के बाद पूज्यश्री का बहुत समय ग्राम देवडीहा नेपाल में भी बीता जहाँ कि बाबा की माताश्री का देहांत होता है एवं विधिवत् श्राद्धादि कर्म होते हैं। जनकपुर, गिरिजा स्थान के अतिरिक्त मधुबनी से उत्तर और मधुबनी बासोपट्टी मार्ग में कलुआही से दक्षिण डोकहर मैया भगवती मंदिर परिसर में भी करीब छः महीने का बाबा का वास हुआ माना जाता है जो स्वयं बाबा के श्रीमुख से मैंने भी सुना था। यदा-कदा ग्राम झिटकी आदि कुछ गाँवों में प्रारंभिक काल में विचरण करते रहने की अवधि में बाबा का समय बीता था। छिट-फुट रोचक सिर्फ कुछ-कुछ कथाएँ हर जगह से सुनने को मिलती अन्यथा क्रमबद्ध उल्लेख बना सकने के लिए कहीं से भी प्रामाणिक एवं क्रमबद्ध सूचनाएँ अप्राप्य है।

गोपालगंज जिला के ग्राम अमही (छथियाँवा) (थाना-भोरे) बाबा के पुण्य जन्म-स्थान भी मैं दो बार गया। बाबा के समकालीन लोग बहुत कम। अगल-बगल के टोले में भी संपर्क किया परंतु वहाँ के लोग सिर्फ इतना जानते हैं कि उन्हीं के ग्राम के ''प्रयाग शुक्ल'' का वह 'बौराहा बेटा' ठाकुर मिथिला के कलना में परमहंस रूप में सेवित, पूजित हैं। अमही से दक्षिण टोला गया। कलना के अतिथि के रूप में लोगों ने स्नेहपूर्ण सत्कार किया परंतु ऐसी जानकारियाँ कि बाबा के जन्म-स्थान से संबंधित कुछ उल्लेखनीय हों -सिर्फ अचरजकारी दो-तीन चर्चाओं के अलावा-कुछ भी उपलब्ध नहीं था।

सिर्फ, बाबा के शुल्क-वंशीय श्री पारस शुक्ल के पुत्र एम० ए० के एक छात्र श्री अजय कुमार शुक्ल ने मुझे एक वंशावली उपलब्ध कराई। श्री शुल्क ने बड़े ही परिश्रम से, 2003 ई० में, सबों से आवश्यक संपर्क के बाद, यह वंशावली अपने पिताश्री एवं अन्यान्य के सौजन्य सहयोग से तैयार किया एवं मुझे दिया। श्री शुक्ल को इसके लिए साधुवाद।

वंशावली
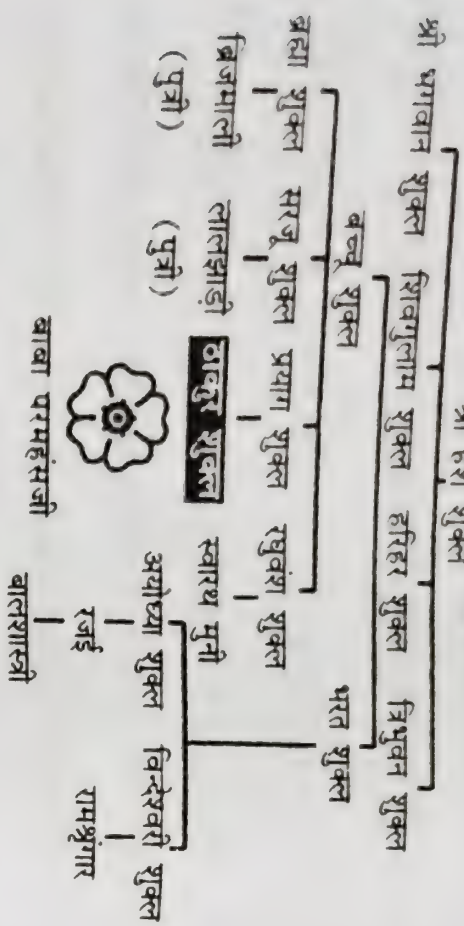
जब बाल्य-काल में बाबा को प्रारंभिक पाठशाला में दीक्षित-शिक्षित कराने के सारे प्रयास उनके पिताजी के निष्फल रह गए तो पिताजी उन्हें गाय के लिए घास काटने खेतों में भेजते। बाबा घास काटने की जगह किसी जगह बैठकर ''राम-राम'' ''शिव-शिव'' भजन करने लगते थे। बाबा अपने पिताजी से यह कहकर घास काटने से असमर्थता व्यक्त कर देते थे कि ''घास काटला में चिंटी मरऽता। हम घास न काटव।'' गाय चराने भेजा जाता था तो वे फिर दिधिया पोखड़े के महार पर स्थित महादेव के मंदिर में एक कोने में बैठकर भजन करने लगते। गुरूजी जब लिखने कहते तो यह कहकर उन्हें चुप्प कर देते ''ओ गुरूजी! राम-राम करूऽ'' ई सब की कहलऽ

हमरा करे ला। पिताजी ने तंग आकर ननिहाल भेज दिया। वहाँ से भी इनके अवढ़ंगेपने के कारण इन्हें लोग इनकी पढ़ाई नहीं करा सकने के कारण पैतृक जगह अमही पिताजी के पास वापस दे गये। पूरा ''बौराहा'' ''पागल' इन्हें समाज के लोग समझने लगे। इन्हें किसी प्रेत-पिशाच के प्रभाव से प्रभावित मानते लोग इन्हें एक भगता के पास ले गए जो जाति का चमार था। जब भगता इन्हें बैठने कहे तो बाबा नहीं बैठते थे। फिर भगता ने इन्हें कहा कि नहीं बैठोगे तो मुँह में थूक दे देंगे। डर से बाबा बैठ गये तो इन्हें लोहे के गर्म शलाके से इनकी दोनों टाँगों को दाग दिया गया। बड़े-बड़े फोले पर गये। पीड़ा और दर्द के बीच बाबा एक महीने चारपाई पर लेटे रहे और पास के गढ्ढे में पैर डुबोकर बैठ जाते। उस गढ्ढे में जोंक की बाहुलता थी। उस गढ्ढे के जोंक उनके पैड़ के फफोले में पैठकर पीव चूस लेते और फिर बाहर निकल जाते। इस तरह एक महीने के बाद करीब घाव ठीक हुआ। बड़े ही यातनारूपक व्यवहार बाबा को अपने अभिभावक और समाज से मिलता था।

एंक दिन कच्चा चावल अधिक मात्रा में बाबा घर में चबाते खा रहे थे। इनकी माँ ने जब देखा तो इनकी पिटाई की और बड़े ही कठोर, कड़वे, वचन कहे। ठाकुल शुक्ल के अंदर का बाबा अब

अमही से टूट रहा था। अमही से छूटना चाहता, विलग होना चाहता था। एक रात उन्हें स्वप्न में आवाज मिली ''तू अयोध्याजी चल आव''। बस, बाबा चुप-चाप पैदल अयोध्याजी चल पड़े। जितने दिनों में अयोध्या पहुँचे हों। अयोध्याजी में भगवान श्रीरामजी के दरबार में कुछ दिन रहने के बाद फिर रामजी ने स्वप्न में बाबा से आदेश दिया कि तुम मिथिला जानकी जी की जनकपुर नगरी चले जाओ।

ये सारी कथाएँ बाबा ने स्वयं अपने मुख से समय-समय पर लोगों को सुनाई। 'परमहंस-प्रभा' पत्रिका के माध्यम भी ये सारी कथाएँ ''गिरीन्द्रमोहनजी'' श्री लल्लन झा जी (कसेरा) द्वारा लिखित प्रकाशित हो चुकी है।

ग्राम अमही वालों को ठाकुर-शुक्ल बाबाश्री के अमही छोड़ने के बाद इनके साथ क्या बीता, इनके साथ क्या हुआ-उन घटनाओं की कोई जानकारी नहीं बन सकी। मात्र अठारह वर्ष की अवस्था में बाबा अमही छोड़ थे जिसका उल्लेख उन्होंने स्वयं भी लोगों से यदा-कदा किया था।

अमही में चाची को बेड़ देकर पुत्र देने, गुरूजी को व्यवहार के विस्मृत ज्ञान का स्मरण कराने आदि-आदि चमत्कारी घटनाओं के

अतिरिक्त एक घटना फिर चर्चा में आती है। इसका उल्लेख रामगुलामदास रचित ''परमहंस चालीसा'' में भी मिलता है एवं बाबा के श्रीमुख से भी संपुष्ट है।

पूज्य बाबा (अमही के तत्कालीन ठाकुर शुक्ल) के तेज से घबराकर एक डाइन ने इन्हें मारने के मंत्रोपचार किया। डाइन लोगों की नजर में खुल गई, स्पष्ट हो गई, और सनक-सनक कर पागल होकर वह मर गई।

> **''डाइन मंत्र मारि मरि गई, सनक भई गुनि गण भरमई''**
> **- (बाबा परमहंस चरितामृत)**

ये सब पाँच वर्ष से सत्रह वर्ष तक की आयु की कथाएँ है। अयोध्याजी से जब ''रामचन्द्र'' जी का आदेश हुआ मिथिला धाम जनकपुर जाने का, बाबा चल दिए। रास्ते में आते-आते हरिहर क्षेत्र सोनपुर पहुँचे। मेला का समय था। एक बाबाजी का लोटा खो गया था। अवढ़ंगे से दिखने वाले ठाकुर शुक्ल (बाबा) पर चुराने का संदेह करते उस बाबाजी ने ठाकुर शुक्ल को पकड़ लिया और प्रताड़न की धमकी देना शुरू किया कि एक पहलवान बीच में आकर खड़े हो गए और बाबा को बचा लिया। बाबा स्वयं कहते थे ''महावीरजी आऽके बचा लेलक''। फिर जितने दिनों में भी ठाकुर शुक्ल, बाबा

जनकपुर मैया नगरी पहुँच गये। इस कुटिया से उस कुटिया जाते खाना नहीं मिलने पर कच्चे कद्दू, कच्चे कोहड़ा तोड़-तोड़ कर क्षुधा शांत करते थे। कुटी-कुटी घूमकर जो मिलता खा लेते। अरवा चावल का भात और राहड़ का दाल बाबा को प्रिय लगता था। शाम के शाम भूखे भी रहते। इसी बीच जनकपुर में देवडीहा के एक ब्राह्मणश्री को बाबा से वाणी (बाक्) मिलने पर पुत्र हो गया। बात फैल गई। एक रात मैया जानकी ने स्वप्न में ठाकुर शुक्ल से कहा "तुम गिरिजा स्थान चले जाओ। वहीं गिरिजा मैया के पास रहो"। बाबा चले आये। गिरिजास्थान के इर्द-गिर्द घूम-घूम कर बाबा दूर-दूर तक चले जाते। देवडीहा के ही पं० बलदेव बाबू व्याकरण के शिक्षक थे। उन्हें दुर्गा पाठ करने कहा। पुत्र हो गया। जहाँ जो मिल जाता खा लेते और जगह-जगह, गृह-गृह को पवित्र कर रहे थे।

बाबा को ओढ़ने के लिए, ठंढक से बचने के लिए तो उनके पास कोई चादर, गर्म कपड़े भी नहीं थे। गिरिजास्थान में खुले ठंढ में रह रहे थे। एक रात बड़ी ठंढ लगी। नहीं सहन करने के लायक था। रात में गिरिजा माई का पट खोलकर उन्हीं की प्रतिमा के नीचे चरणों में आकर लेट गये। बाबा कहते थे "जाड़ मिट गेल। क्षुधा शांत हो गेल"। फिर गिरिजा मैया का आदेश हुआ कि तुम कल्याणेश्वर चले जाओ।

गिरिजा मैया के आदेश से बाबा कल्याणेश्वर चले आये। "याम्ये सिद्धिप्रदं लिंगम कल्याणेश्वरनामकम्"। कल्याणेश्वर में पंडा लोगों ने बाबा को वहाँ रहने, रात में ठहरने की मनाही की। वहाँ रहने में पंडा लोगों ने उनका विरोध किया बहुत विरोध किया लेकिन बाबा ने नहीं माना। फिर कल्याणेश्वरनाथ महादेव ने स्वप्न में कहा "तुम यहीं रहो और कच्चे फल खाकर रहो"।

बस, बाबा अपनी जगह पहुँच चुके थे। अब कलना में ही केन्द्रित रहते गिरिजा-स्थान, जनकपुर जानकीधाम जानकी मैया, आदि जगहों जा-जाकर दर्शन किया करते थे। रात, दिन, दोपहर-समय का कोई ठीक नहीं। जनकपुर चले जाते, गिरिजा स्थान चले जाते।

कलना के पचकौड़ी जी अपने मुँह कहते थे। एक रात 10 बजे बाबा ने पचकौड़ी से कहा "पचकौड़ी, जनकपुर चलऽ"। पचकौड़ी ने कहा "रात मे बाबा? बाबा ने कहा-चलऽ" रातों-रात पचकौड़ी और बाबा जानकी मंदिर पहुँचे। जानकी मंदिर का बाहरी दरवाजा (मुख्य द्वार) बंद था। बाबा के पहुँचते ही फाटक अपने आप खुल गया। फिर अंदर गए तो मंदिर का पट भी अपने आप हट गया। बाबा ने बाहर ही से दर्शन किए और फिर रातों-रात कलना चले आये।

हमलोगों के बीच के अत्यंत ही बहुआयामी प्रवृत्ति के श्रेष्ठ साधकों में पैट घाट, लोहना, झंझाड़पुर के श्री महेन्द्र मिश्र तांत्रिक जी हैं जिनका सीधा सम्पर्क गाँव-गाँव के, जगह-जगह के उनलोगों से रहा है जिनके यहाँ, जिन ग्रामों में, बाबा सम्बन्धी जीवन्त संस्मरण विद्यमान हैं।

जयनगर से पश्चिम, कलना से पूरब धमियाँपट्टी एक ग्राम है। पूर्व के जमींदार परिवार के, इसी गाँव के स्व० एन०एन० ठाकुर इतिहास के ख्याति प्राप्त विद्वान सेवानिवृत्त प्रधानाचार्य (हाजीपुर महाविद्यालय) थे। उन्होंने श्री तांत्रिक जी को बाबा के सम्बन्ध में लिखित आलेख दिये थे। बहुत समय बाबा का, मिथिला पदार्पण के साथ, धमियाँपट्टी में भी बीता था।

१९२५ ई0 तक बाबा कलना क्षेत्र में आ ही गये थे। उस ठाकुर परिवार से बाबा के फलाहार के निमित्त 10 कट्ठा खेत छोड़ दिया गया था जिसमें आलू, कद्दू, आदि की खेती होती थी। परन्तु बाबा ने कोई कारण रखकर उसे बन्द करवा दिया।

ग्राम छतौनी के स्व० बाबू हरिनन्दन सिंह ने बाबा के दूध लिए दूध हेतु एक भैंस समर्पित करना चाहा जिसकी बाबा ने मनाही कर दी। छतौनी बाबा जाते थे। परिवार-परिवार के लोग बाबा की सेवा में आमुख रहते थे।

कलना से सटे ग्राम विशौल के स्व० गंगाधर झा ज्यौतिषी के यहाँ, महिनाथपुर स्व० तुरंत लाल झा ज्यौतिषी, कसेरा के स्व० दानी बाबू, श्री नचारी बाबू, पोतगाह के स्व० मार्कण्डेय झा (श्री नथुनी झा जी के पिता), झिटुकी के चौधरी परिवार आदि से बराबर बाबा सेवा लेते थे, इन गाँवों में यदा-कदा जाते भी थे।

पिपरौन के ख्याति प्राप्त ज्यौतिषी स्व० सुरत लाल झा के यहाँ उन दिनों बाबा का बराबर जाना-आना रहता था। स्व० सुरत लाल झा जी के सुपुत्र श्री उमेश झा जी अभी भी बाबा सम्बन्धी संस्मरणों के उल्लेख के लिए श्रोत-पुरूषों के रूप में उपलब्ध हैं।

बेनीपट्टी प्रखंड के ग्राम धकजरी, सरिसव आदि जगहों से तो एक-से-एक कथा रूपक प्रामाणिक संस्मरण उपलब्ध हैं। धकजरी में स्व० जगदीश मिश्र जी के पोखड़े में स्नान करने के क्रम में स्व० जगदीश मिश्र के एक कर्मचारी द्वारा पुज्य बाबा को थप्पड़ से, हाथ के चाट से मारने का उस कर्मचारी के समस्त परिवार को मिला भयावह दण्ड उल्लेखनीय है और आम चर्चा का संस्मरण है। बाबा के श्री मुख से स्वयं मैंने सुना **"मारलक। दाल फुट गेल। धवले गेली। कपिलेश्वरनाथ से नालिस कऽ देली।"**

विटहर में एक जगह बाबा को चूड़ा-दही खाने दिया गया।

खाने के क्रम में कही गयी एक कटु वाणी के कारण विटहर से ही बाबा ने अन्न खाना छोड़ दिया और फिर कल्याणेश्वरनाथ महादेव का भी आदेश हुआ। कच्चे फल, फलाहार पर बाबा आ गये।

ये सारी कथाएँ बाबा स्वयं भी समय-समय पर, मनरंजन की मुद्रा में हँस-हँस कर लोगों को सुनाते थे। फिर एक ने दूसरे से इसे सत्यापित पाया और भिन्न-भिन्न चालीसाओं, लेखों और आलेखों के माध्यम प्रकाशित होने के कारण, (खासकर बाबा के जीवन काल में ही) **इन कथाओं को प्रामाणिकता की मुहर लग गई।**

ठाकुर शुक्ल बाबा परमहंसजी अपने माता-पिता के एकमात्र पुत्र थे। ठाकुर शुक्ल (बाबा) के अवतारी होने के प्रमाण सब तो पाँच-छः वर्ष की अवस्था से ही मिलने लगे थे लेकिन सांसारिक कामनाओं से जकड़े माता-पिता की नजरों मे वे 'पागल' 'बौड़ाहे' से भिन्न कुछ दिख ही नहीं सके। गृह-त्याग करने के वर्षों बाद तक जब उनका घर वापस होना नहीं हुआ तो बूढ़े दम्पत्ति बाबा के माँ-बाप विक्षिप्त, अर्द्ध विक्षिप्त हो गए। ऐसे ही में स्वनाम-धन्य प्रयाग शुक्ल बाबा के पिताश्री का देहावसान हो गया। माँ वैधव्य एवं एकमात्र पुत्र से बिछुड़े रहने की अवस्था में निरीहता, निःस्सहायता के तले बुझी-बुझी सी आँखों अकल्पनीय स्थिति में अपने दिन जैसे, गिन

रही थी। शायद उनकी स्थिति ने प्रभु को साधु रूप में आकर यह सूचना देने मजबूर कर दिया ''कि तुम्हारा बेटा जनकपुर के नजदीक गिरिजास्थान में रह रहा है। तुम वहाँ जाओ, तुम्हें वह मिल जायगा।'' बस इतना कहते साधु लुप्त हो गये''। माँ विशेष कोई मार्ग-दर्शन नहीं प्राप्त कर सकी। चल पड़ी जनकपुर गिरिजास्थान की दिशा में। **उसकी खोज में जो सबसे हारा, थका, निराश, निराश्रय का अंतिमाश्रय होता है- उस माँ का तो वह बेटा ही था। माँ के दशा-भाव से बेटा की खोज में वह माँ, जिसके सबकुछ उसके लिए किसी काम के उसके बेटे बिना नहीं रह गये थे-चल पड़ी। सांसारिक-माया-बंधन की स्थिति के प्राणियों के लिए तो हृदय-विदारक इन स्थितियों की कल्पना तक असह्य हो सकती है।**

प्रभु ने माँ-बेटे मिलन का मार्ग तो तय ही कर दिया था। माँ चल पड़ी थी-बेटे से मिलना तो था ही। जैसे भी आई हों, जितने दिनों में आई हों लेकिन माँ जनकपुर पहुँच गई और वहाँ से गिरिजास्थान की जानकारी मिली। और अंत में पहुँच ही गई गिरिजास्थान। अपनी नजर से उसने देख लिया अपने ठाकुर को—हम सबके बाबा को—पहचान गई उसे और पहचानते ही आकर लिपट गई। बेटे से लिपट-लिपट कर रोने लगी। वह दृश्य कैसा रहा होगा। वर्षों-वर्ष के

दबे हुए संशय, शोक और संताप आँसू में बहते चले गये होंगे। देखने वाले भी स्तब्ध-अचंभित। बूढ़ी के मुँह लोगों को उसके बेटे उस बौराहे का सारा वृतांत सुनने को मिला। माँ ने बहुत मनाया, बहुत जिद्द की कि बेटा वापस उनके साथ अमही चले। लेकिन बेटा गिरिजामाई को छोड़कर कहाँ जानेवाला था। **यदि बेटे का समर्पण गिरिजामाई के साथ तो माँ का भी समर्पण अपने उस बेटे के प्रति था जो आज जीव-जगत का राखनिहारा हमारा आपका सबका स्वामी कर्त्ता-भर्त्ता-हर्त्ता दाता-दीन दुःखी के राखनिहारा है।** ऐसी स्थिति में ठाकुर शुक्ल बाबा भी किंकर्त्तव्यविमूढ़ दिख रहे थे और माँ से कह रहे थे **''ए जग हम कैसे राखव तोरा, कहाँ राखव। घर चल जो। हम त ना जैवौ।'' माँ भी कह रही थी ''हम तोरा छोड़के कहाँ जायब, की लेवे जायव। हमहू तोरे साथे रहव।''**

धन्य है वह नगरी, वह गाँव-देवडीहा। गिरिजा-स्थान और जनकपुर के बीच। नेपाल-राज में। वहीं के एक ब्राह्मण वैद्य सुदेव झा सब देख रहे, सब सुन रहे थे। नवरात्रा का समय था। वहीं गिरिजास्थान में रहकर नवाह्न-पाठ में वे संलग्न थे। उन्हें नहीं यह दृश्य बर्दाश्त हुआ। **बेटा माँ के साथ वापस जायेगा नहीं-माँ बेटे**

को छोड़कर जानेवाली थी नहीं। बेटा कह रहा था मैं तुम्हें कहाँ रखूँगा-कैसे रखूँगा। माँ कह रही थी जैसे रखो, जहाँ रखो, जैसे तुम रहोगे वैसे ही रहूँगी लेकिन मैं तुम्हें छोड़कर अब कहाँ जाऊँगी।

यहाँ न माँ का चल रहा था और न बेटे ही का चल रहा था। विधि के विधान के अधीन सब लीला हो रही थी। वैद्यश्री सुदेव झा जी से यह सब देखना, सुनना सह्य नहीं हो पा रहा था। मैया के दरबार में उनकी तपस्या भी प्रायः सुनी जा चुकी थी। माँ गिरिजा की प्रेरणा से उन्होंने माँ-बेटे के बीच आकर हस्तक्षेप करते हुए बाबा से विनतीपूर्वक कहा ''बाबा, मैं भी ब्राह्मण हूँ। आप दोनों माँ-बेटे मेरे गाँव, मेरे साथ देवडीहा चलें। आपलोग हमलोगों के साथ हमारे परिवार में रहेंगे। हमलोग आपकी सेवा करेंगे।''

पूज्य बाबा अपनी माँ के साथ आखिर देवडीहा आ गये। माँ को लेकर कैसे रहे, कितने दिन रहे इस सबकी विस्तार से जानकारी नहीं पा सका। माँ का देहान्त वहीं देवडीहा में हुआ। बाबा माँ को संस्कार देने से भाग रहे थे। वे उन्हें जलाने के लिए, मुखाग्नि देने के लिए नहीं तैयार हो रहे थे। वे कहते थे कि ''ना ! हम ना आग देव। हम श्राद्ध कैसे करव''? लेकिन गाँववालों ने उन्हें आखिर राजी

किया। बाबा ने मुखाग्नि दी। कहा कि "सड़ही आम के गाछ काट के लाव आ ओंही के लकड़ी में जड़ावऽ।" ऐसा ही हुआ। विधिवत् श्राद्ध हुआ। सारे कर्म हुए।

इतने के प्रमाण उपलब्ध हैं कि उतने दिनों में बाबा की प्रशस्ति एक सिद्ध महात्मा के रूप में जगह-जगह फैल चुकी थी। उनकी वाणी से बहुतों को कल्याण हुए थे। बाबा को लोग पूजा भाव से देखते थे। परंतु विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं हो सकी। **काल-भैरव के मंदिर से आकाशवाणी होने के पहले तक बाबा को लोग "बाबाजी" कहकर संबोधित करते थे। "बाबाजी" नाम से ही उनका स्मरण करते थे**

अठ्ठारह वर्ष की अवस्था में ही जन्म-स्थान अमही छोड़ दिया। अमही से कलना आकर स्थापित यहीं रहने के बीच का क्रमबद्ध विवरण इससे अधिक नहीं प्राप्त हो सका है। परंतु इतनी बातें हैं जो सभी लोगों को मिली जानकारी के आधार पर समान, सबसे मिलती-जुलती, सर्व-सम्मत है।

दो विन्दु पर मतैक्यता नहीं है कि अमही छोड़ने और कलना में स्थिर-स्थापित रहने के बीच बाबा अमही गये अथवा नही। फिर कोई-कोई कहते हैं कि अपनी माँ को बाबा ने स्वयं अमही से लाया। लेकिन दिया गया विवरण प्रामाणिक है।

***

जो चाहै आपन कल्याणा, आवै सोई कलना स्थाना

नास्तिक, अनीश्वरवादियों में आस्तिकता एवं ईश्वरवादिता के अलख जगा करने हेतु सुरसा जैसी उनकी लिप्साओं के बीच हार खा रहे उनके पौरूष एवं कामनांध-जनित उनकी अधीरता, उनके अन्यान्य आनुसंगिक स्थितियों में उनकी सांसारिक रिक्तताओं की अभिपूर्ति एवं आकांक्षाओं के प्रतिफलन हेतु उनसे, आपसे, हमसे, **सबसे ऊपर की सर्वशक्तिमान शक्ति को रीझाने, प्रसन्न करने का मार्ग राम-रमा-जपन, हनुमान-चालीसा पाठ, रामायण पाठ आदि का आश्रय ग्रहण कराकर लोभी, कामी, क्रोधी सबों को अपने चरणों में श्रांति देना, आश्रय देना उनकी आशा एवं उनके विश्वास को प्रतिफलित करना ही बाबा का काम था।**

फिर एक ने दूसरे के विश्वास को फलते देखा। आश बन गया। नाम का आश्रय, पाठ का अवलंवन, शुचिता का योग, उपदेशक को प्रसन्न करना, प्रसन्न किए रहना, करते रहना—उस आश्रयाकांक्षी का आदर्श बन गया, उद्देश्य बन गया। यही साध्य बना और साधना भी।

साधु की अवमानना, देव स्थानों से ढ़िठै करना आदि से **डर बनता गया।** दिन-रात एक-से-एक को त्राण पाते, गूँगे को बोलने लगे, चमत्कारी लाभों से अनुप्रमाणित होते लोगों को देखते उन सबों के द्वारा किए जा रहे पाठ, जप, सेवा, आराधना के अनुकरण में आशा बनने लगी। **आशा पूरी हो, नहीं हो-इसके बीच आस्था के साथ इस तरह कर्ममय रहना जीवन का उद्देश्य बन गया कि बाबा प्रसन्न रहें। देर है, उनके प्रसन्न होने में। वे जब चाहेंगे, कुछ भी संभव हो जायेगा।** धीरे-धीरे बाबा की न्यायपरकता का दर्शन होता गया। राजा-रंक, मिनिस्टर-कलक्टर, मूर्ख-ज्ञानी सब एक साथ दुःखिया के रूप में रहने को मिलता गया। ''रहिमन दुःखिया सब संसार'' का बोध होता गया। **पूज्य बाबा के प्रसन्नार्थ, उनके डर से प्रेरित रहने में अनुचित-उचित, प्रशंसनीय-भर्त्सनीय, धर्म-अधर्म, आदि के बीच फर्क करने का विवेक -विकसित होता गया।** क्योंकि अब भाव यह बन गया कि शायद हमारी पूर्व की गल्तियाँ है कि मेरी वाँछित कामना सिद्ध नहीं हो रही है, मैं संकट में हूँ। बाबा अंतर्यामी थे, करूणावत्सल थे। **जिस पर कृपा होती थी, उसे ही वह दृष्टि मिलती थी। जो भी शरण में आते थे, यदि उनकी कृपा होती थी तो उन्हें यह ज्ञान हो जाता था कि बाबा**

अंतर्यामी हैं। इनके साथ झूठ-फूस छिपाना संभव नहीं है। ''कोई देखे या न देखे, बाबा देख रहे हैं।''

अपनी बात कहता हूँ। मैं तीस वर्षों से कलना-आश्रम से जुड़ा हूँ। उस समय, दो-तीन महीने मात्र मेरे कलना में प्रवेश किए हुए थे। दो-चार बार आया गया होऊँगा। सबको देखते थे कि अपने कष्ट, दुःख, समस्याओं की अर्जी करते थे। मेरी पत्नी को भी कुछ स्वास्थ्य संबंधी समस्या थी।

एक बात निवेदित कर दूँ। दिनों-दिन रहे हुए लोगों को भी बाबा की वाणी सुनने का मौका नहीं मिलता था। आप कहते हैं-वे सुन रहे हैं कि नहीं-आपको गौर करना होगा, प्रतीक्षा करनी होगी।

मैंने पत्नी के संबंध में बाबा से अर्जी की कि बाबा मेरी पत्नी को यह कष्ट है। बाबा ने सीधे कह दिया ''बाजार से (मेरे घर के नजदीक के बाजार का नाम लेते हुए) से जे एक्कैस रूपया के औषध लाके देलऽ ओ में त' एऽ जग की न हो जाइत''। मैं क्षुब्ध रह गया। कैसे समझा बाबा ने कि मैंनें एक्कीस रूपये की दवा लाकर बाजार से पत्नी को दिया थां।

अन्यान्य अनेकों, पूर्व के अनगिनत लोगों के सदृश मुझे भी इसका एहसास बाबा ने कराने की कृपा की कि वे अन्तर्यामी थे।

नाम की, माहात्म्य की चर्चा से प्रभावित लोगों का उनके यहाँ दौड़ना स्वाभाविक था। निपुत्र को पुत्र मिला, नि:संतान को संतान हुआ, गूँगा वाचाल हुआ, अंधा देखने लगा। जिसकी कृपा ऐसी है वहाँ से अपने भाग्य के बदलने की आशा होना स्वाभाविक है। **इस तरह, विश्वास करऽ, हनुमान चालीसा पढ़, सीताराम के पाठ करऽ, पिपड़ी में जल दऽ, आदि-आदि जिसके लायक जो उपदेश था वह उपदेश देकर उस कर्म में उसे प्रवृत्त कर उसे कर्ममय बनाकर ईश्वर की न्यायशीलता, दयाशीलता, अपने भाग्य, प्राप्त स्थितियों को भाग्यादेश रूप में सहना, उसके साथ बरतना, क्रोध, निराशा की जगह शांति, विश्वास और ईश्वरेच्छा पर समर्पित जीवन के लिए जीने का अवलंव मिल जाता था। ऐसे ही में "हारे को हरिनाम" "निर्बल के बल राम" चरितार्थ होता है।**

संस्मरणों, चर्चा-योग्य कथाओं को प्रस्तुत करने के क्रम में याद आती है एक कथा। **कल्याणेश्वरधाम के मुख्य पंडा स्व0 कामेश्वरजी के बड़े पुत्र श्री किशुनजी यदा-कदा सुनाते हैं।**

एक बार उनके पिताजी और पूज्य बाबा पैदल छपरा चले। रास्ते में एक जगह पूल था जिस पर दोनों जा रहे थे कि एकाएक पीछे से रेलगाड़ी पूल पर आ गई दिखी-पंडाजी घबराकर बाबा से

बोले बाबा हमलोग नदी में कूद जाएँ। अब नहीं बचेंगे। गाड़ी पीछे पूल पर पहुँच गयी थी। बचने की कोई संभावना ही नहीं थी। गाड़ी आ रही थी। बाबा ने पंडा को आगे कर दिया और कहा तुम आगे चलो। दोनों पूल के उस पार हुए तब ही गाड़ी भी पूल पार हुई। पंडाजी बोलते थे कि उन्हें आश्चर्य लगा कि कैसे वे गाड़ी से पहले ही पूल के पार हो गए और बच गए। **बाबा स्वयं कहते थे "हरिहरनाथ आके बचा लेलक।"**

उक्त पंडाजी के पुत्र वर्त्तमान के पंडा बाबा की महिमा-चर्चा करते अपने पिताजी की शादी की चर्चा करते हैं। अवस्था अधिक हो जाने और अन्य कारणों से उनकी शादी नहीं कहीं संभव हो रही थी। सब मान बैठे थे कि उनकी शादी अब नहीं होगी। पूज्य बाबा चाहते थे कि कहीं शादी हो जाये।

चतुर्दिक यह शोर था कि बाबा निराश हो गए लोगों का सुनते हैं। पंडाजी की जाति के ही एक व्यक्ति बाबा के पास गुहार लगाने आये। उनके भाई को लड़की थी, लड़का नहीं हो रहा था। उक्त पंडाजी ने विनती करते हुए बाबा से अपने भाई के लिए पुत्र की याचना की। सुनाया कि बाबा हमारे भाई को बेटी है-शादी करने के लायक है लेकिन लड़का नहीं। आप एक पुत्र दीजिए जिससे वंश की

रक्षा हो। बाबा ने कहा ''लड़का होई। तूँ ए गो शर्त्त करऽ जे अपना भतीजी से हमर पंडा के विआह करा देव।'' उसने हाँ कह दिया और कहा कि बाबा यदि लड़का होगा तो हम अपनी भतीजी की शादी आपके पंडा से करा देंगें। बाबा की कृपा। उन्हें डेढ़ वर्ष में एक लड़का हुआ। उस पंडाजी को बाबा के साथ किए गए वादे की बात याद आई। उन्होंने परिवार में यह बात रखी। सभी सगे-संबंधी इनके विरोध में चले गये कि नहीं कलना के उस पंडा के साथ लड़की की शादी नहीं होगी।

बात पूरे समाज के सामने विचारणीय बन गई। पूरा समाज कलनाबाबा के नाम किए गए किसी कबुला अथवा मनौती से मुकरने का साहस अनिष्ट हो जाने के डर से नहीं कर सकता था। सबों का विचार हुआ कि जब बाबा की आज्ञा है, उन्हें मंजूर है तो प्रसन्न मन शादी करा दें। **सब मंगलमय होगा नहीं तो पूरा समाज अनिष्ट भोगने के लिए तैयार रहे।**

शादी हुई। उक्त पंडाजी के कई लड़के हुए, लड़कियाँ हुई। सुव्यवस्थित, सुस्थापित इनके पोते, पोती आदि आज सगर्व बाबा की कृपामयिता, उनकी शक्तियों को सुना-सुनाकर अपने भी आनंदित होते हैं और दूसरों को भी प्रेरित करते हैं।

***

हम कुच्छो ना हैं, हम ब्राह्मण हैं

''पूज्य बाबा'' के अपने मुखारविंद अपने संबंध में उनका यह उद्घोष अनंत शोध का विषय है ''हम कुच्छो ना हैं, हम ब्राह्मण हैं''। फिर इसके आगे ही उन्होंने कहा ''**ब्राह्मण के की बूझऽलऽ? ठठ्ठा। ब्राह्मण से तीनू लोक काँपऽला। ब्राह्मण-ब्राह्मण लेखा रही तब नूँ**''।

आज के माहौल का यदि कोई निरीक्षण करे तो एक ''ब्राह्मण-विरोधी' ''ऐंटी ब्राह्मण'' आम-भावना, यत्र-तत्र, हर स्तर पर अनुभव होती मिलती है। ब्राह्मण शब्द से जैसे चीढ़, खीझ बहुतों में अनुभव किया जा सकता है। ''ब्राह्मण'' के रूप में जाने जाते लोगों से चीढ़ लेकिन ब्राह्मण के आवरण-आचरण के प्रति रूझान, ब्राह्मण के रूप में पूजित-प्रतिष्ठित होने की ललक। बिल्कुल विरोधाभासी यह अन्तः-स्थिति है।

क्या उस ज्ञान-विज्ञान, उस जीवन-कला, उस जीवन-चर्या, उसकी वैज्ञानिकता से हम अवगत होना नहीं चाहेंगे जिसके बल पर,

जिसके कारण किसी का भी कभी अहित हुआ ही नहीं, हजारों हजार को नित्-नित्, नूतन-नूतन नया जीवन मिला मिल रहा है और मिलता रहेगा? **क्या उस आचरण और चर्या से हम अवगत होना नहीं चाहेंगे जिसके श्रोत से अपनी रक्षा हेतु सारे कवच हमें प्राप्त हो सकते? क्या उन सत्यों को नकारना अपने उच्चतर हितों के लिए हमारे लिए वाँछनीय है जिन सत्यों के सहारे हम मानव-मानव, देश-देश, जात-जात के संकीर्ण दायरे से उठकर मानव मात्र, वसुधैव हिताय समर्थ, सक्षम बन सकते हैं? किसी औषधि से किसी व्याधि का स्वस्थ शमन हो सकता है तो क्या उस औषधि के नाम सुनने तक से अपनी एलर्जी रहने के कारण हम उस औषधि का सेवन ही नहीं करेंगे? समन्वयकारी चेतना-शक्ति के अभाव में सारे शोध-कार्य अर्थ-हीन बन सकते हैं। नई-नई उपलब्धियाँ बेकार बनकर रह सकती हैं। सागर के समीप रहते हुए भी कोई प्यास से मर सकता है?**

पूज्य बाबा का उपर्युक्त उद्घोष गंभीरता से लेने, समझने और आत्मसात करने का अनुपम विषय है। संबंधित संस्मरण यों है।

एक दिन संध्याकाल और सेवक-भाईयों के साथ मैं भी बाबा की कुटिया में बैठकर उनके चरण के समीप पाठ-अर्चना कर रहा था। हम चार-पाँच की संख्या में थे। उनमें एक सुगौना के हमारे स्व०

गोविन्दजी हमारे गुरू भाई निश्चित ही थे। गोविन्दजी ने ही बाबा से विनतीपूर्वक एक प्रश्न किया और जवाब जो पूज्य बाबा ने अपने श्रीमुख से दिया वह ऐसा था कि एक-एक हम सेवक, गुरूभाई सहित आम-भक्तों, सभी समान-धर्मी भाईयों के हेतु "उधरहिं विमल विलोचन ही के" सदृश रहस्योद्घाटक है। बाबा ने अपना परिचय दिया।

उसी शाम, हमलोगों के बीच बैठे गोविन्दजी ने बाबा से प्रश्न पूछ दिये "बाबा। आप किसी को महादेव के रूप में भासित होते हैं, किसी को हनुमान के रूप में दिखते हैं, फिर किसी को किसी रूप, दूसरे को आप दूसरे रूपों में भासित होते हैं। आखिर आप हैं कौन बाबा? गोविन्दजी के प्रश्न को बाबा ने टाल दिया, दूसरे बार भी टाला। जैसे वे सुने ही नहीं हों। फिर तीसरे बार भी गोविन्दजी ने बाबा से वही प्रश्न पूछ दिया और कहा बाबा "हम सब बच्चे हैं आपके। आज बाबा साफ-साफ हमलोगों से कह दीजिए बाबा ! बाबा ! बाबा ! कहकर गोविन्दजी ने बाबा को जवाब देने मजबूर कर ही दिया।

बाबा ने कहा "की दिक्क करऽ लऽ। हम कुच्छो नाँ हैऽ। हम ब्राह्मण हैंऽ" गोविन्दजी इस जवाब से संतुष्ट नहीं थे। उन्होंने समझा "बाबा ने कुछ कह दिया"। फिर गोविन्दजी ने बाबा से कहा "नहीं बाबा। ठगिये नहीं बाबा। आज सत्य-सत्य कह दीजिए बाबा। आप क्या हैं"?

बाबा जैसे रंजित हो गये। उन्होंने पलटकर डाँटते हुए गोविन्दजी से कहा ''कही ले से बूझऽ लऽ ना''? हम कुच्छो ना हैं। हम ब्राह्मण हैं। ब्राह्मण के की बूझऽ लऽ-ठठ्ठा।'' ब्राह्मण-ब्राह्मण लेखा रही तब नूँ? ब्राह्मण से तीनू लोक काँपे लाऽ। ब्राह्मण ब्राह्मण लेखा रही तब नूँ।''

पूज्य बाबा जिनके लिए भी जो रहे हों, जिन्हें जिस रूप में भासित हुए हों, परंतु अपने शब्दों में तो बाबा ब्राह्मण ही थे। ''अभय होंहिं जे तुम्हहिं डेराहीं''। पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी ने भी तो ब्राह्मण का डर माना। ब्राह्मण से भय होने को मानसानुगारियों द्वारा आदर्श-सूत्र माना गया है। ''तपबल विप्र सदा बरियारा''।

बस यही था अपने परिचय में बाबा का जवाब। वे ''दाता देव दयानिधि स्वामी'' थे ''अष्ट-सिद्धि नव-निधि के दाता थे।'' काल तक उनके परिसर में बिना उनकी विशेष अनुमति के झाँक नहीं सकता था। यह सबों का अनुभव है, सत्य है, सर्वमान्य है।

शोध-प्रवीण, जिज्ञासु व्यक्तियों के लिए बाबा की यह परम-वाणी अनंत शोध हेतु एक महती महत्व का विषय प्रस्तुत करती है कि वह ''ब्राह्मण-लेखा रहने की जीवन-पद्धति'' क्या होगी जिसके बाबा मूर्त्त-रूप थे।

जय गिरिजा महरानी

***

''सुमिरिअ नाम रूप विनु देखे''

धर्म का ह्रास होता है, अमानवीय प्रवृत्तियाँ चरम पार करती रहती हैं, संत रूप में, नर रूप में प्रभु स्वयं अवतरित होते हैं और अपनी विशिष्ट शक्तियों द्वारा कामी, क्रोधी, लोभी, लालची, सभी प्रकार के आर्त्त को उनकी त्राहि-त्राहि के क्रंदन से उन्हें त्राण दिलाते, उनमें सद्मार्ग, सद्वृत्ति को परिवेष्टित करते नव-युग निर्माण के प्रारंभिक कार्य (Spade-work) करते हैं। अन्यायी से निर्बल को न्याय-दिलाकर उसकी रक्षा करना, अभिशप्तों का उद्धार करना, त्राहि-माम् करते आये शरणागत को त्राण देने के माध्यम आस्था और आचरण में क्रांतिकारी, समूल परिवर्त्तन, (अदृश्य-रूपक प्रेरणाओं से) करते रहने की, लीला जिसने अहर्निश की, **जैसा जीवन-काल में सुनता था, आज भी शरीर त्याग के बाद भी वैसे ही सुनता है, क्या वह सिर्फ मात्र उनके हित के लिए था और है जो उनके पास गये और साथ रहे? नहीं, वह तो नाम है, शक्ति है, अविनाशी है, आज भी है, सब दिन रहेगा, हमारे लिए है और विश्वभर के लिए है।**

हमारा तो विश्वास है, आप कोई हों कहीं भी हों, विश्व के किसी कोने में हों, क्या आप सबसे हार थक चुके हैं? क्या आपके साथ जो होना चाहिए आपको नहीं मिल रहा है? क्या आप निराश्रय अनुभव करते हैं? आप आवाज दीजिए, आप **"नमो भगवते बाबाश्री परमहंसायनम:"** नाम के अंतिमाश्रय से अपना तादात्म्य बनाईये, आपका सुना जायगा, आपका न्याय आपसे कोई छिन नहीं सकता है। विश्वास कीजिए।

एक संस्मरण बड़ा ही माकूल लगता है। ग्राम परजुआर मधुबनी जिला के एक ब्राह्मण मेरे सामने आये। मैं कलना धाम में ही था। ब्राह्मण अत्यंत गरीब निर्बल थे। मात्र कुछेक कट्ठे खेत में उन्होंने गेहूँ की खेती की थी और बस इतनी ही फसल का उन्हें अवलंब था। वे काँवर लेकर बाबा वैद्यनाथधाम गये थे। एक दबंग व्यक्ति ने दुश्मनी से उनके पूरे खेत के पौधे को भैंस से चरा दिया। वापस आने पर उनकी पत्नी ने उन्हें घर में पैर रखते ही रो-रोकर सारी स्थिति सुना दी। वे बेचारे बेहवाल सीधे खेत पर दौड़े। नुकशानी उन्हें देखा नहीं गया। बाबाधाम से काँवर लेकर [illegible] थे-विह्वल एकाएक उनके मन में आया कि जाकर **कलना-बाबा** के यहाँ नालिश कर दी जाय। गेहूँ के पौधे का एक छोटा बोझा माथे पर ले चल दिया कलना बाबा के पास।

बाबा दंडीनाथ हैं-निर्बल, निःस्सहाय के बल, उनके सहायक। बाबा के समक्ष जाकर उस ब्राह्मण ने, पोखरे में पैर-हाथ धोने के बाद, गेहूँ के पौधे का वह बड़ा गट्ठर बाबा के समक्ष रख कर फूट-फूट कर रोने लगे। **"सुन्दर सर मज्जनते करहीं तत्पश्चात् चरण तब धरहीं"।**

मैं भी वहीं था। बाबा ने सेवकों से पूछा-ई के है? काहे रोवऽता? लोगों ने उनका परिचय लेकर एवं उनकी बात सुनकर उस गरीब ब्राह्मण के साथ हुई क्षति को बाबा को सुना दिया। बाबा ने सुनवाई ली, वे सुनने लगे कि फिर ब्राह्मण अधीर, रोते, बाबा के पैड़ पकर कर रोने लगे ।

बाबा ने कहा **"धीर रक्खऽ। न ऐ त' तैयो हम फैसला करवे करती। आ गेलऽ त' अब जल्दी होइ। हमरा ब्राह्मण के नोर न बर्दास्त है"।**

बाबा ठेठ भोजपुरी बोलते थे। उन्होंने कहा "धैर्य रखो। नहीं आते फिर भी मैं फैसला करता ही। अब आ गए हो तो जल्दी करूँगा। मुझे ब्राह्मणों के आँसू बर्दास्त नहीं है"।

बस नजदीक के गाँव के उस ब्राह्मण को पता था कि बाबा के यहाँ फैसला है। बस क्या था बाबा ने इतना कह दिया। **धैर्य, संतोष**

न्याय पर विश्वास और सांत्वना के लिए सब कुछ उस दीन दुःखिया को मिल गया। इससे अधिक वह निर्बल कर ही क्या सकता था और इससे अधिक उस निःस्सहाय को और चाहिए ही क्या था।

ईश्वर के यहाँ देर है, अंधेर नहीं है। संपूर्ण मानवीय स्थितियों में, नीति पर आस्था, न्याय, ईश्वर पर विश्वास, संतोष एवं धैर्य का पाठ देना ही जैसे बाबा की दैनिक चर्याओं में था।

''दिन-दुःखी के राखनिहारे
सबके बिगड़े काज सम्हारे''

* * *

ए जग त' अयोध्याजी के लड्डू ना' मिली ए जग तऽ ईहे (तुलसीदल) मिली

इस अभावरूपक स्थिति में जबकि पूज्य प्रातः स्मरणीय बाबा के शरीर छोड़ने के बाद उनके संबंध में कोई प्रामाणिक ग्रन्थ हमारे बीच नहीं है जो कि उनके उपदेशों, उनकी वाणियों एवं उनकी जीवन-कथा से आज की एवं आनेवाली पीढ़ी को उत्प्राणित कर सके,। ऐसे में ऐसे-ऐसे संस्मरण बड़े ही सहायक सिद्ध हो सकते हैं **जो अपने आप में अत्यधिक आध्यात्मिक महत्व के तथ्यों का उद्घाटन करने के साथ-साथ बाबा के विराट अन्तः-स्वरूप की हमें झलक देते हैं। ऐसे एक ग्रंथ का अभाव पग-पग पर खटकता रहा है।**

एक दिन की बात है, परिक्रमा (जनकपुर मिथिला परिक्रमा) का समय बीत गया था। दूर-दूर से, देश के कोने-कोने से, इसमें शामिल होने संत आते हैं। परिक्रमा के बाद अपने-अपने स्थानों पर वापस जाने का उनका क्रम था जिसमें जनकपुर से कलना के रास्ते

कलना से 3 कि०मी० पर विशौल स्थित मिथिला-प्रसिद्ध विश्वामित्र आश्रम पर अयोध्या वापस जाते समय दो चार संत ठहर गये थे। उन्हें वहाँ जानने योग्य हुआ कि सटे 3 कि०मी० दक्षिण स्थित कल्याणेश्वरनाथ महादेव का मंदिर है एवं वहाँ के परमहंस बाबा के दर्शन जरूर कर लें। प्राय: वह संतों का दल करूणा के 'सरकार' के दर्शन करते कलना आया था। दिन के दो बजे करीब वे पहुँचे। मैं भी वहीं था।

अयोध्या नगरी में अनेकों स्थल 'महल' 'मंदिर' 'गद्दी' 'अखाड़े' आदि-आदि नामों से प्रख्यात हैं जिनके अलावा फिर अलग-अलग कुटिया 'महंथाना' है। ये लोग अपने-अपने 'स्थानों' के अखाड़े के महंथ थे। उनका वेश-लिवास ही कह रहा था कि वे सम्पन्नता की पृष्ठभूमि के परंपरागत महंथ लोग थे।

कलना-परिसर में प्रवेश करते ही लोगों की नजर उन आगन्तुक वेश-धारी महात्माओं को निहारने लगी। उन लोगों ने कलना शिव-गंगा में जाकर हाथ-पैड़ प्रच्छालन किए एवं स्थिर भाव से जिज्ञासाएँ शुरू की। इसके बाद परिसर के अंदर शिव मंदिर-आँगन में प्रवेश किया एवं एक-एक मंदिर में स्थित देव-महादेव के दर्शन किए। उस समय पूज्य परमहंस बाबा कुछ भक्तों के साथ धूप में अपनी कुटिया के आगे बैठे थे। मैं भी बैठा था।

वहीं बाबा के साथ बैठे हमलोगों में से किसी से, वहीं खड़े होकर, उन महात्माओं ने पूछा ''साहब, यहाँ कोई परमहंसजी महाराज रहते हैं। उनसे दर्शन करा सकते है?'' परमहंस बाबा स्वयं वहाँ बैठे थे।

पूज्य बाबा की विशिष्टताओं में विचित्र विशिष्टता एक यह भी थी की कि कहीं भी भूमि पर ही बाबा सबके साथ एक-समान ही बैठते थे। **वेश-लिवास के नाम पर एक टुकड़े के (पहनने) अलावे तो कोई वस्त्र भी बाबा की देह पर नहीं रहता था। तिलक-छाप आदि कुछ नहीं। सप्ताह में, दो सप्ताह पर उनकी दाढ़ी बनाई जाती थी। इस तरह सामान्य स्वरूप के 'ग्रामीण गरीब बूढ़े' से भिन्न कुछ न दिखनेवाले हम सबों के उस 'गरीब-नाथ' के साथ तो कुछ न था। स्वाभाविक था उनके सामने बैठे रहने के बावजूद उन साधुओं को परमहंस बाबा की खोज करनी पड़ी कि बाबा परमहंसजी कौन हैं, उनके दर्शन करा दीजिए।**

लोगों के द्वारा कहे जाने पर कि बाबा स्वयं उनके सामने बैठे हुए हैं, अयोध्या के उन महंथों ने पारंपरिक मर्यादा के अनुकूल बाबा को प्रणाम किया। आव-भाव उनकी भंगिमा से लगा जैसे-उन्होंने समझा कि परमहंस जी नाम से जिन्हें जाना जाता है वे कोई

कलना से 3 कि०मी० पर विशौल स्थित मिथिला-प्रसिद्ध विश्वामित्र आश्रम पर अयोध्या वापस जाते समय दो चार संत ठहर गये थे। उन्हें वहाँ जानने योग्य हुआ कि सटे 3 कि०मी० दक्षिण स्थित कल्याणेश्वरनाथ महादेव का मंदिर है एवं वहाँ के परमहंस बाबा के दर्शन जरूर कर लें। प्रायः वह संतों का दल करुणा के 'सरकार' के दर्शन करते कलना आया था। दिन के दो बजे करीब वे पहुँचे। मैं भी वहीं था।

अयोध्या नगरी में अनेकों स्थल 'महल' 'मंदिर' 'गद्दी' 'अखाड़' आदि-आदि नामों से प्रख्यात हैं जिनके अलावा फिर अलग-अलग कुटिया 'महंथाना' है। ये लोग अपने-अपने 'स्थानों' के अखाड़े के महंथ थे। उनका वेश-लिवास ही कह रहा था कि वे सम्पन्नता की पृष्ठभूमि के परंपरागत महंथ लोग थे।

कलना-परिसर में प्रवेश करते ही लोगों की नजर उन आगन्तुक वेश-धारी महात्माओं को निहारने लगी। उन लोगों ने कलना शिव-गंगा में जाकर हाथ-मुँह प्रच्छालन किए एवं स्थिर भाव से जिज्ञासाएँ शुरू की। इसके बाद परिसर के अंदर शिव मंदिर-आँगन में प्रवेश किया एवं एक-एक मंदिर में स्थित देव-महादेव के दर्शन किए। उस समय पूज्य परमहंस बाबा कुछ भक्तों के साथ धूप में अपनी कुटिया के आगे बैठे थे। मैं भी बैठा था।

वहीं बाबा के साथ बैठे हमलोगों में से किसी से, वहीं खड़े होकर, उन महात्माओं ने पूछा "साहब, यहाँ कोई परमहंसजी महाराज रहते हैं। उनसे दर्शन करा सकते है?" परमहंस बाबा स्वयं वहाँ बैठे थे।

पूज्य बाबा की विशिष्टताओं में विचित्र विशिष्टता एक यह भी थी की कि कहीं भी भूमि पर ही बाबा सबके साथ एक-समान ही बैठते थे। **वेश-लिवास के नाम पर एक टुकड़े के (पहनने) अलावे तो कोई वस्त्र भी बाबा की देह पर नहीं रहता था। तिलक-छाप आदि कुछ नहीं। सप्ताह में, दो सप्ताह पर उनकी दाढ़ी बनाई जाती थी। इस तरह सामान्य स्वरूप के 'ग्रामीण गरीब बूढ़े' से भिन्न कुछ न दिखनेवाले हम सबों के उस 'गरीब-नाथ' के साथ तो कुछ न था। स्वाभाविक था उनके सामने बैठे रहने के बावजूद उन साधुओं को परमहंस बाबा की खोज करनी पड़ी कि बाबा परमहंसजी कौन हैं, उनके दर्शन करा दीजिए।**

लोगों के द्वारा कहे जाने पर कि बाबा स्वयं उनके सामने बैठे हुए हैं, अयोध्या के उन महंथों ने पारंपरिक मर्यादा के अनुकूल बाबा को प्रणाम किया। आव-भाव उनकी भंगिमा से लगा जैसे-उन्होंने समझा कि परमहंस जी नाम से जिन्हें जाना जाता है वे कोई

वैसे ही "**नामधारीपरमहंस**" हैं। बाबा को उन आगंतुक महात्माओं का परिचय दिया गया। अंतर्यामी प्रभु परमहंस बाबा जान चुके थे कि उन साधुओं के मन में उन्हें देखकर परमहंस रूप में उन्हें स्वीकारने हेतु संदेह हुआ था और शायद उसी विश्मय जनित उनके संदेह को दूर कर देने की कृपा करने का बाबा ने प्रायः मन ही बना लिया।

वेश-भूषा, आवास-लिवास, स्वरूप, तड़क-भड़क आदि में पुरूषों की महानता खोजने वाली प्रवृत्ति से मुक्त रहने से प्रायः वे पधारे हुए महापुरूष वंचित ही रह रहे थे।

वे लोग बाबा के सामने बैठे। उनके कृपा-सानिध्य में कुछ समय सुनते-सुनाते वे साधु लोग बाबा से विदा होने की इच्छा व्यक्त कर बैठे और कहा कि रात में विशौल में ही रहना है। वहाँ वे लोग अपने आसन छोड़ते दर्शनार्थ चले आये थे। बाबा ने तुरंत इशारा किया और बस, तुलसी के पत्ते बाबा के सामने किसी पंडा ने लाकर रख दिया। उसमें से तुलसी के दो-चार पत्ते बाबा ने प्रत्येक आगन्तुक संत को दिया और कहा कि "ए जग तऽ अयोध्यया ईहे मिली, । खा लऽ" तुलसी को प्रसाद समझते स्वीकार करते उन साधुओं ने वहीं बैठे-बैठे ही तुलसी खाना चाहा कि तुरंत ही किसी सेवक ने कहा कि यहाँ का नियम है कि घाट पर जाकर ही तुलसी पत्ते का पान

किया जाता और पुनः हाथ धोकर ही आकर बैठा जाता है। यहाँ नहीं खाया जाय, घाट पर खाकर हाथ धोकर आया जाय। वे लोग तुरंत चले गये। तुलसी दल खाये, हाथ धोया फिर पुनः हाजिर, परंतु इनती देर में कैसी झलक दे दी बाबा ने, क्या अनुभव कराया बाबा ने, बाबा ही जाने परंतु उन संतों ने आते ही बाबा के सामने साष्टाँग दंडवत करते कहा- **सरकार, मिल गया-सबकुछ मिल गया-सरकार। मिथिला-दर्शन का लाभ मिल गया। हम धन्य हो गये। हम बाणी से कुछ व्यक्त नहीं कर सकते। अब जाने के लिए आज्ञा देने की कृपा की जाय।**

जन-सामान्य वृद्ध-ग्रामीण की तरह तब-तक दिखते बाबा ने तुलसी-प्रसाद के माध्यम उनमें प्रायः अपनी अंतर्मयी शक्ति का उन्हें आभास करा दिया था। यही थी योगी राज की शक्ति, उनकी कृपा और उनकी लीला की गति।

"सोइ जानई
जेहि देहु जनाई"

* * *

बाबा परमहंस जेहि ध्यावै, सोइ अमित जीवन-फल पावै

प्रकृत्ति द्वारा प्रदत्त जीव मात्र के लिए उन्नीसवीं शताब्दी के एक अनुपम अवदान हैं "**बाबापरमहंसजी**"। नर रूप में **बाबा परमहंसजी** कलना बाबा इस धरती पर अवतरित हुए। हजारों के हजार, जगह-जगह लोगों ने इनसे नव-जीवन प्राप्त किये।

उनलोगों से मेरे संपर्क का, उनके अनुभव जानने का दायरा तो अत्यंत सीमित है। जिन-जिन लोगों ने अपनी-अपनी स्थितियों में, कष्ट, दारूण-विपदा के बीच लाभ प्राप्त किए और जीवन-पर्य्यन्त बाबा-मय रह गए, उनके कृपाधीन हो गये। परंतु यह रहस्यमय ही रह गया है कि **बाबा की लीला का कृपाक्षेत्र कहाँ तक था, किन-किन के लिए किस-किस प्रयोजन से उनका अवतरण हुआ था परंतु एक तथ्य की समानता तो सभी प्रमाणों से अनुभव्य है कि वे कृपालु थे, दी-दुःखियों के उद्दार के लिए, उन्हें त्राण देने के लिए और उसके माध्यम उनमें विश्वास जागृत करने के लिए ही उनका अवतरण था।**

न इसमें देश-कोस की सीमा है, न जात-पात का विभेद है, और न ही छोटे-बड़े का कोई विचार।

बिहार में मधुबनी जिलान्तर्गत मधुबनी जिला के खास राजनगर के एक मुस्लिम परिवार की बात है। मैं उस परिवार के मंजर साहब को व्यक्तिगत रूप से जानता था। मैं कलना धाम पर ही था। एक दिन एकाएक परिसर के बाहर मंजर साहब को पेड़ के नीचे छाया में बैठे किसी की प्रतीक्षा करते देखा। अपने इलाके के किसी को देखकर मेरी जिज्ञासा बनी और मैंने पूछा- मंजर साहब इधर कहाँ से आ रहे हैं। उन्होंने मुझसे पूछा "सर, आप यहाँ कैसे?" मैंने उन्हें कहा "मैं तो यहीं बाबा के शरण में बराबर आया-जाया करता हूँ" उन्होंने कहा "तब तो मेरा काम बन गया, सर। क्या आपको बाबा से बात-चीत होती है?" तो उन्होंने सुनाया कि उनका भागीन पागल हो गया था। वे हर जगह से थक-हार चुके थे। मैं भी जानता था कि मंजर साहब संपन्न मुस्लिम परिवार के थे और दरभंगा महाराज के सिपहसालार रहने के कारण उनके संपर्क बड़ी-बड़ी जगहों से, बड़े-बड़े लोगों से था। मंजर साहेब ने कहा कि उनका परिवार अपने उस भागीन के चंगे होने के लिए बिलख रहा था। कोई रास्ता नहीं दिख रहा था। हर जगह से हार-थक चुके थे। किसी सज्जन ने उन्हें

कहा कि हिन्दू के एक देवता कलना मंदिर पर परमहंस बाबा रहते हैं। उनकी मनौती कर दो। देखो तुम्हारा भागिन ठीक होता है कि नहीं। मंजर साहब ने मुझे कहा कि उन्होंने मनौती कर दी कि "हे कलना के बाबा! मेरे भागिन को ठीक कर दीजिए। मैं आपकी मनौती चढ़ाऊँगा। मेरा पूरा परिवार एहसानमंद रहेगा।" मंजर साहब ने कहा कि जिस दिन मनौती की उसी रात से बच्चे में अजीबोगरीब तरह का सुधार शुरू हुआ। धीरे- धीरे बच्चा सामान्य क्रिया-कलाप का बनता गया। कोई डाक्टर-हकीम की जरूरत नहीं रही। अब बच्चा एकदम ठीक है। बहुत दिन हो गए, जिसने कलना बाबा का नाम कहा उसे हम खोज नहीं पाते हैं। हमलोग सब मान रहे हैं कि बाबा ने हम पर दुआ की है। सबने सोचा कि बाबा की मनौती हाजिर कर देना है। लेकिन हमलोग नहीं जानते हैं कि इस हिन्दू के देवता को क्या चढ़ौना चढ़ता है" मंजर साहब ने मुझसे कहा कि सर आप जाकर मेरी हाजिरी पहुँचा दीजिए और मेरे ऐसे के लिए बाबा का क्या हुक्म होता है मुझे आकर कहने का कष्ट कीजिए और वे रोने लगे"।

मैं गया। सहमते हुए बाबा के सामने परिसर से बाहर बैठे राजनगर के उस मुस्लिम भाई की बातें बाबा के सामने अर्ज की। और लोग बैठे थे। प्रायः बहुतों को आश्चर्य लगा होगा कि क्या बाबा

मुस्लिम की आवाज भी सुनते हैं। बाबा ने सुनकर मुझे कहा "जाऽ। जा के कह दऽ। ई विश्वास के फल है। ओही जग से शिवजी के प्रणाम क' के चल जाइ" मैंने पूछा "बाबा कुछ चढ़ौना क्या चढ़ायगा" बाबा ने कहा "हो गेल, कलानेश्वर नाथ के प्रणाम कऽ के चल जाई।"

मैं दौड़ते हुए आया और मंजर से सारी बातें कह दी। वह भौंचक रह गया। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि क्या उसकी हाजिरी हो गई। उसे विश्वास दिलाया गया, उसका मन मान गया और प्रेम और कृतज्ञता के आँसू बहाते वह वापस अपनी कहानी, बाबा की महिमा जगह-जगह सुनाते घर चला गया।

यह कौन-सा योग था? यह कैसे संत थे? यह कैसा दरबार है? इस कृपा-लाभ-वर्षण की क्या सीमाएँ हैं? इसका क्या रहस्य है? कौन जाने?

***

जाकी जैसी चाकरी

मात्र दो वर्ष पूरे हो रहे हैं। मेरा साक्षात्कार हुआ एक संत श्री छलियाबाबा से। मैं भी सपरिवार उस यात्रा में एक नवाह के लिए 'कलना-वास' में था। संयोग से छलिया बाबा भी कलना-स्थान पर ही दो-चार दिन पहले से टिके हुए थे।

छलियावावा नागा संप्रदाय के हैं। जानकारी मिली कि उत्तर-प्रदेश अथवा मध्य प्रदेश के किसी नागा अखाड़ा के वे पूज्य महंथ हैं। कलना से मात्र चार कोस की दूरी पर, गिरिजा माई के परिसर से सटे एक किलोमीटर पर मनोकामना नाथ महादेव का मंदिर है। उनके शिष्य महात्मा श्री राम भूषणदासजी महाराज वहीं से अपने धार्मिक-आध्यात्मिक कार्यक्रमों का संचालन करते हैं। जानने योग्य हुआ कि कभी मिथिला-भ्रमण में छलिया बाबा आए थे तो उन्होंने ही मनोकामना-नाथ महादेव के परिसर में तपस्यापूर्वक रहकर जन-सामान्य के लिए दिन-रात रहने, ठहरने के लायक उस परिसर को जागृत किया था। छलिया बाबा "कलना बाबा" को अपना गुरू मानते हुए उनका स्मरण करते थे।

माननीय छलिया बाबा से मैंने पूछा कि कलना बाबा को आप कैसे अपना गुरू मानते हैं। उन्होंने मुझे कहा "तुम कहते हो गुरू। रे मेरा माई-बाप, जीवन-देनेवाला सब कलना बाबा हैं। यह देह कलना-बाबा की है। छलिया तो मर गया था। यह छलिया जो आज जिंदा दुनियाँ में दहाड़ रहा है वह परमहंस बाबा का जीवन दिया हुआ है। मैं तो मर गया था।" मैंने पूछा-यह कैसे जरा सुनाने की कृपा कीजिए। उन्होनें बात को आगे बढ़ाते हुए कहा।

देखो एक बार हम मनोकामना नाथ में रह रहे थे। बहुत जोर बीमार पड़े। बिमारी बढ़ती गई। राम भूषण भी नहीं था। पाँच-सात दिनों में मेरी हालत हो गई कि हमारे पास आने-जाने वाले लोगों ने भी मेरे पास आना बंद कर दिया। मैं उठकर बैठने लायक भी नहीं रह गया था। बस मैं एक-दिन दो-दिन का मेहमान था। मैं जीवन से हार गया था।

रात में सोया था। स्वप्न में बाबा परमहंसजी दर्शन दिए। कहा "उठऽ। तोरा कुच्छो ना होवता। दू बाल्टीन पानी माथ पर उलेड़ के नहालऽ। आ धिकाओल पानी दू घोंट पी लऽ" (तुम्हें कुछ नहीं हो रहा है। दो बाल्टी पानी माथा पर उलेड़कर नहा लो और दो घूँट गरम पानी पी लो।") बस इतना कह कर वे अंतर्ध्यान हो गये। मेरी नींद

टूटी। मैं सवेरा होने की प्रतीक्षा करने लगा। सुबह होते ही दूर में एक आदमी को देखा। उसे किसी तरह बुलाया और उससे गिड़गिड़ाते हुए कहा "भैया तुम दो बाल्टीन पानी मेरे माथे पर उलेड़ दो और जरा मेरी धूनी (आग की) जला दो।" छलिया बाबा ने कहा कि **वह आदमी भी डर से उनकी देह पर दो बाल्टीन पानी उलेड़ने से हिचकिचा रहा था कि कहीं मैं मर ना जाऊँ, लेकिन बाबा की कृपा थी।** वह तैयार हो गया। दो बाल्टीन पानी मेरे माथे पर उलेड़ दिया। मुझे तो लगा मेरा सब दुःख, शारीरिक कष्ट हवा में उड़ गया। अब तो उस सज्जन के सहारे छलिया बाबा ने स्वयं अपनी नागाशाही धूनी चेता ली (जला लिया) उसी पर पानी गर्म किया और दो घूँट गर्म पानी पी लिया। बस चंगे हो गये। गाँजे का दम चलने लगा। पूर्ववत् शक्ति और उत्साह प्राप्त हो गया। अपने पैदल चले आए कलना। देह नमाकर हाजिरी दी। कलना बाबा गुरू महराज मेरा जीवन-दाता है। उन्होंने जयकार लगाया "बोलिए बाबा परमहंसजी की" हम सबों ने कहा "जय"।

मैं आश्चर्यचकित रह गया। कहो तो कहाँ तक है बाबा परमहंस जी का कृपा-क्षेत्र। कैसे किसी पर ऐसा दया, इस तरह कर देते हैं। मेरे मन में प्रश्न उठने लगे- **कैसे बाबा ने छलिया बाबा की सुधि ली, उसने तो विशेष रूप से निर्भरता पूर्वक बाबापरमहंसजी की याद भी नहीं की थी। लेकिन बाबा की तरह की अहैतुकी उनकी कृपा का, उनकी अचरजकारी ऐसी-ऐसी लीलाओं का रहस्य कोई कैसे जाने?**

लेकिन अपने ढ़ंग से एक जवाब मिलता है। **हार गए थे छलिया बाबा। लेकिन थे सेवक मनोकामना नाथ के, मनोकामना नाथ की सेवा की थी।** अग्रिम सेवा के लायक योग्य थे, पवित्र थे। **कल्याणेश्वरनाथ, मनोकामनानाथ सब तो एक ही हैं। "कल्याणेश्वर धरि सगुनहिं वेषा" ही तो बाबा परमहंसजी थे। स्वप्न माध्यम ही तो अधिकांश उनकी लीलाएँ हुई है। "जाकी जैसी चाकरी बाको वैसा देय"।**

कहीं का, कभी का किया हुआ सत्कर्म कहाँ, कब, किस रूप में सहायक होता है।

जो चाहे आपन कल्याणा
आवै सोइ कलना स्थाना।

ठीक उसी तरह की एक घटना याद आती है अपने सामने की। बिहार के मिथिलांचल में सब्जी बेचनेवाली महिला को कुजरनी कहा जाता है। एक कुजरनी नहा-धोकर बाबा के चढ़ौना के लिए एक सजुअन (लौका) पथिया में ढ़ककर बाहर द्वार पर बैठी थी। मैं बाहर निकला था। एक कोई पंडाजी भी मेरे साथ थे।

लोगों की धारणा थी कि बाबा मुस्लिम के अथवा ऐसी जाति के लोगों की सुनवाई नहीं करते हैं। उस कुजरनी ने कहा कि वह बड़े कष्ट में थी। किसी ने कहा कि कलना बाबा का कबुलाकर दो कष्ट दूर हो जायगा, हम कबुला कर दिये। हमारा कष्ट दूर हो गया। हम ई चढ़ौना लेकर आये हैं। हमको बाबा से भेंट करा दीजिए। हम ई चढ़ौना क्या करें''।

उस कुजरनी ने मुझसे अपनी बात सुनाई और कहा कि गंभीर संकट से बाबा का नाम लेकर, उनके नाम मनौती कर वह ऊबर गई थी। वह सजुअन लेकर चढ़ौना चढ़ाने आई है। मेरे साथ सुनने वाले पंडाजी ने मुझे ही कहा बाबा से उसका निवेदन पहुँचाने। पूज्य बाबा से जाकर उस मुस्लिम महिला की बात कही गई। बाबा ने उस पंडा को उसका सजुअन ले लेने कहा और उस कुजरनी को वहीं से प्रणाम करते चले जाने का आदेश मिला।

ये तीनों संस्मरण दर्शाते हैं कि **जिसका कहीं न सुना जा सका, जिसे कहीं से निदान नहीं मिला, वह ''कष्ट हरण दुःखिया सुख दाता'' बाबा परमहंसजी का सुमिरन किया उसे त्राण मिला।**

आज भी, विश्वास किया जाना चाहिए, जो भी प्रभु का स्मरण करेंगे वो ''अमित फल'' की प्राप्ति करेंगे।

मेरी तो समझ है कि जितने ही बाबा के आश्रित, शरणार्थी, कृपाभाजन होंगे उतने ही ग्रंथ तैयार हो सकते हैं यदि एक-एक

अपने-अपने संपूर्ण अनुभवों को, संस्मरणों को पुस्तक रूप में प्रकाशित करने लगें। अब लोग महसूस करने लगे हैं कि किसी तरह हमलागों की चालू पीढ़ी के द्वारा कृतज्ञता के दृष्टिकोण से, मानव-कल्याण हितार्थ प्रकाशन माध्यम सेवा किया जाना आवश्यक है जिसे कि लोग टालकर, अवाँछनीय समझते रख रहे थे।

एक कारण स्पष्ट है। हमलोगों में कोई भी जो पूज्य बाबा के सान्निध्य में रह उनसे कृतार्थ हुए, उनके शरणार्थी हुए यह तो तभी संभव हुआ जबकि हमें कहीं से ऐसी चर्चा, उनके माहात्म्य का गुण-गान सुनने का अवसर मिला। यदि हम कहीं से सुने नहीं रहते, हमें जानने का मौका नहीं मिला रहता तो हम भी नहीं कलना बाबा के पास जा सके होते। और जब हम यह देख रहे हैं कि शरीर त्याग करने के बाद आज भी हमारे बीच बाबा हमारी सारी बातों के लिए वैसी ही लीला कर रहे हैं, वैसे ही हमारे काम के हैं और सिर्फ उनका नाम भजन, उनपर विश्वास, उनके उपदेशों पर विश्वास काम दे रहा है **तो क्या अपने उन संस्मरणों को हम अपने तक ही सीमित कर रखे रहें यह हमारा अपराध नहीं होगा।** साहित्य का आखिर प्रयोजन क्या होता है और सत्-साहित्य के अक्षय भंडार में ''बाल-ब्रह्मचारी तू संता, तू अनंत तब कथा अनंता'' की कथा-गाथा का नहीं रहना एक अवाँछनीय रिक्तता का बोध कराता है।

* * *

''तोरा हम बानी नू, ओकरा पाठ लेवे दऽ''

विचित्र थी बाबा की शासन-पद्धति, दंड-व्यवस्था। एक दिन की एक घटना बड़ी ही रोचक, रहस्य युक्त, वर्णणीय है जिसका संस्मरण एकाएक याद आ जाता है।

बाबा के सान्निध्य में कई एक की तरह दो पंडित रहते थे। बाबा स्वयं उन्हें रख रहे थे। पंडितों को दक्षिणा दिलाकर, उनसे पाठ करवाकर बाबा लोगों के त्राण का मार्ग प्रशस्त करवाते थे। दोनों पंडित एक-दूसरे से हमेशा झगड़ते रहते थे। दोनों के बीच समय-समय का होता झंझट स्थान की शांति भंग कर देता था। कभी-कभी लोग ऐसा भी सोचने मजबूर हो जाते थे कि क्यों दोनों पंडित को बाबा यहाँ एक जगह, एक साथ रख रहे हैं। दोनों के भोजन की अलग-अलग, अपनी-अपनी व्यवस्था थी। एक को बाबा ने स्थान के जैसे राजपंडित का स्थान दिया तो दूसरे को साथ अपनी कुटिया में रखते। साथ में सुलाते भी थे। बाबा के सानिध्य में तो सदैव ब्राह्मण रहने ही चाहिए।

यदा-कदा दोनों पंडित के बीच होते रहते झंझट विवाद की तरह एक दिन सुबह से ही दोनों के बीच का झगड़ा लग रहा था कि

मल्ल युद्ध का रूप ले लेगा। लोग दोनों को शांत करने कोई कठोर कदम उठाते कि बीच ही में पूज्य श्री नें अपना कड़ा रूप अख्तियार करते एक पंडा से आदेश दे दिया ''जो हरलाखी। दरोगा के कहिहे, आऽके दर्शन करी (जाओ हरलाखी और दरोगा से कहोगे कि आकर दर्शन करेगा)''। बस, सब शांत, लोगों को भी राहत मिली और दोनों पंडित भी शांत। अब हमारे ऐसे-ऐसे लोग उत्सुकता में कि देखे आज क्या होता है। अपने-अपने पूजा-पाठ आदि की चर्या में लगे लोगों की इस ओर प्रतीक्षा थी कि कब दरोगा जी आते हैं, बाबा क्या करवाते हैं।

बाबा के आदेशवाहक पंडा जी वापस आए कहा कि दरोगा जी बाबा जल्दी ही आ रहे हैं। दरोगाजी को तो बाबा का आदेश मिल गया था। उन्होंने नहाया-धोया और चल पड़े बाबा की हाजिरी देने। बहुत दिनों से दरबार हाजिरी में नहीं आ पाये थे। ठेहुने में दर्द था जो लाइलाज बन गया था। बाबा से आशीर्वाद मिलने पर काफी राहत मिली थी लेकिन पूर्णरूप से ठीक नहीं हुए थे। अंदर ही अंदर उन्हें ग्लानि थी कि बाबा की हाजिरी बहुत दिनों से नहीं दे पाये थे। उनके आने पर यह समझने लायक हुआ कि भुल गये बाबा ने उन्हें अपनी याद दिला दी।

कलना में पहुँचते पैड़ हाथ धो, आहन-वाहन बाहर छोड़ते दरोगाजी बाबा के समक्ष नत्-मस्तक हाजिर और पहले माफी माँगी कि बाबा हम बहुत दिनों से व्यस्तता के कारण दर्शन करने नहीं आ पा रहे थे। दर्द बाबा बहुत आराम हुआ है लेकिन कसर है ही।

लोग इधर उत्सुक हैं देखने कि दोनों पंडित का शासन दरोगाजी के हाथों क्या होता है। इधर दोनों झगड़े हुए पंडित में दबंग, आक्रामक रहने वाले पंडित की अंतर्दशा क्या रही होगी-कल्पना की जा सकती है। दूसरे पंडित भी अंदर से भयभीत रहे ही होगें। दोनों अपनी-अपनी जगह पूजा-पाठ में लगे थे।

बाबा ने दरोगाजी से पूछा "दर्द पूरा ठीक ना भेल हऽ"। दरोगा ने कहा "बाबा? दर्द बहुत है लेकिन बहुत आराम हुआ है"। बाबा ने कहा "जऽर में कुछ है"। दरोगाजी बाबा की भाषा समझते थे। दरोगाजी समझ गए बाबा पूछे रहे हैं कि पास में कुछ पैसा है। दरोगाजी पाकेट पर हाथ देते बोले "जी सरकार, कुछ है"। बाबा ने कहा "कुछो दुर्गाजी पर चढ़ा द"। दरोगाजी ने कहा "जी, बाबा, जो आदेश"। बाबा ने किसी से इशारा किया। उसी झगड़े हुए दोनों पंडितों में एक पंडित को बुलाने के लिए। उसे बुलाया गया। बाबा ने कहा "दुर्गा पोथी ले ले आब"। पंडित दुर्गा-पुस्तक लेकर बाबा के

सामने आ गए। ब्राबा ने दरोगाजी से कहा "जे है से दुर्गाजी पर चढ़ा दी। आ ई दुर्गा-पाठ कऽ दी। एकरा दक्षिणा दे देव"। दरोगाजी उल्लसित हो गए जैसे बाबा ने उनकी कोई अनजान गलती से उन्हें, उसके दंड से उन्हें बरी कर दिया हो और फिर दरोगा जी ने कहा "जी बाबा, पंडित जी को दक्षिणा हम दे देंगे। फिर बाबा ने कहा "देखऽ न! बड़ा उपद्रवी लोग है। पोखड़ी में उपद्रव करऽ ता, सब के डाँट-डपट कऽ दऽ"। दरोगाजी बाबा से विदा लेते, लोगों को हड़काते-भड़काते, डाँट-डपट करते अपने थाना पर चले गये।

लोग अचंभित। यह क्या हुआ? बाबा ने क्यों बुलाया दरोगाजी को और क्या करवाया उनसे उन दोनो झगड़ते पंडितों को? समझने वाले अपने-अपने ढ़ंग से समझते रहे।

पंडा जो दरोगाजी को बुलाने गए, उनका मान-सम्मान दरोगाजी की नजर में बढ़ गया। पंडा की मान्यता बाबा के दूत के रूप में मिली। दूत के दरोगा को बुलाने के लिए जाने के बाद से दोनों लड़ते-झगड़ते, परिसर को अशांत बनाकर रखने वाले दोनों पंडितों में जो जबर्दस्त थे उन्हें कम-से-कम इस डर से कि दरबार में पंडित होते हुए आज लोगों के सामने वे पुलिस के हाथ, पुलिस के मुँह, पुलिस द्वारा फटकारे जायेंगे, इस डर से, ग्लानि से, आशंका की अंतर्यातना

से कैसा दंड-भोग अंदर ही अंदर वे भुगते होंगें-अनुमान किया जा सकता है। जो पंडित कमजोर थे उन्हें डर था कि पुलिस से शासित होने के बाद आक्रोश और प्रतिक्रिया में फिर उस दुसरे पंडित द्वारा आगे क्या बितेगा उनके साथ। लोगों में यह चर्चा कि देखो बाबा के रहते आज पुलिस को अंदर की शांति-व्यवस्था के लिए को पुलिस को बुलाना पड़ रहा है।

दरोगा जी के जाने के बाद पूरे परिसर के लोग अर्चंभित। दबंग पंडित जी ने अंतर्यातनाका दंड-भोग भोग लिया। छोटे पंडित ने देखा कि दंडित करवाने की जगह बाबा ने उनके बड़े पंडित को और ही दरोगाजी से दक्षिणा दिलाकर मनोबल बढ़ा दिया और उन्हें कुछ नहीं मिला। वे कातर दृष्टि से बाबा की ओर देख रहे थे तो उनकी अंत:स्थिति को समझते हुए बाबा ने कहा **''ओकरा पाठ लेवे दऽ न। तोरा हम बानी नू''**। लोगों ने देखा कि पुलिस के साथ उनके झगड़े की कोई चर्चा तक बाबा ने नहीं की। यही थी बाबा की दंड-व्यवस्था, शासन व्यवस्था।

***

कलना - 'तब'

बाबा स्वयं जगत्‌जननी मैया जानकी, माँ गिरिजा महरानी, बाबा कल्याणेश्वर की समस्त शक्तियों के नर-रूप में उनके प्रतिनिधि -स्वरूप ही थे परंतु थे वे दास। **जहाँ अन्याय पीठों से अपने देवत्व को पहचानने, विकसित करने के पटल का उद्‌घोष मिलता है, कलना से सेवक-भाव, समर्पण-भाव विकसित करने का पटल मिलता। बाबा की गिरिजा-मैया को, जानकी मैया को ''मोहि सेवक समय प्रिय कोउ नाहीं'' है। बाबा भक्तों को हनुमान, महादेव आदि के रूप में भासित होते स्वयं उनके दास थे और यही दास-भाव-''अहमोऽस्मि'' भाव-नहीं-उनकी पीठ से जाग्रत होता था।**

मैं जब पहली बार कलना पहुँचा था उससे 45-50 वर्ष पहले से बाबा कलना आकर कलना में रह रहे थे। शनैः-शनैः उनकी कीर्त्ति का यश, जो उनकी लीला थी, यह दूर-दूर तक फैल चुका था कि कलना में एक ''बाबाजी'' रहते हैं, खुले में, कच्चे इमली, कच्चे फल खाते हैं। देवडीहा के ब्राह्मणों को, आस-पास के लोगों के बीच

यह विश्वास फैल चुका था कि बाबा की दृष्टि पड़ने से निःसंतान को संतान मिल जाता है, संकट मिट जाते हैं, इन्हें प्रसन्न करने से मनोभिलषित फल मिलता है।

कल्याणेश्वरनाथ के दर्शनार्थ, पूजार्थी तो आते ही थे। **अब कल्याणेश्वरनाथ अपने कल्याणकारी नर-रूप में लोगों को भासित होने लगे। कष्ट से, पीड़ा से, कामना से आतुर लोगों का धीरे-धीरे आना बढ़ने लगा।**

सत्य सुना जाता है कि महिलायें तो बाबा के नजदीक जाने का भी साहस नहीं कर पाती थी। बाबा के नजदीक जाकर उनके चरण-स्पर्श कर सकने के लायक अपने को समझने के लिए लोगों को रहस्य सब मिलने लगे। 'शुचिता'-पेशाब भी करके आये हों तो स्नान कर और स्वच्छ वस्त्र पहनकर। **'सीताराम-सीताराम' के नाम भजन के साथ-साथ अन्यान्य भजनों, अन्यान्य उपदेशों के अमोघ प्रसाद की झोली बाबा की अब खुल चुकी थी जिससे हनुमान चालीसा पाठ, शिव-शिव भजन, गिरिजा दुर्गा, पाठ आदि-आदि अमोघ रत्न मंत्र रूप में मिलते गये।** जितनी बार कोई बाहर जाय, पैड़ धोकर अंदर आवे जिसका पालन आज तक अक्षुण्ण है। पूज्य बाबा के समीप खैनी मुँह में रखकर, लम्बी धोती पैड़ तक

लटके पहनकर सामने होने का साहस नहीं किया जा सकता था। पैर-हाथ धोकर, धोती को ठेहुन तक सीमट कर करबद्ध आर्त्त आरजू-विनती करते सीताराम नाम रटते, हनुमान-चालीसा पाठ करते, कृपा दृष्टि के लिए लोग खड़े रहते थे। बाबा की कुटिया में शाम में, रात में प्रकाश नहीं जलता था। बाबा की कुटिया में जो आज भी वैसे ही है, झाड़ू नहीं पड़ता था। लोगों को कभी-कंभी कुटिया में साँप भी नजर आते थे। चूहे की भरमार थी। बाबा उसी में रहते थे। धीरे-धीरे बाबा ने कुटिया के अंदर लोगों को बुलाना शुरू किया, लोग निःश्शंक जाने लगे।

एक दिन की एक घटना है। स्व० लक्ष्मीकांत पंडाजी हाल ही कुछ वर्षों पहले दिवंगत हुए है। एक दिन धोखा से पंडाजी आरती लेकर शाम में बाबा की कुटिया में प्रवेश कर गए कि ऐसा भयंकर सर्प छत्र काढ़े बाबा के सिरहने के नजदीक बाबा की रखवारी करते नजर आया कि पंडाजी पीठ के बल ही आतंक से गिड़े। हल्ला हो गया। लोगों ने बाबा से कहा—**बाबा ने कहा "ढ़िठै न नू करे के"।**

जब मैं पहुँचा था तब कुछ-कुछ विकास के नाम पर घाट-निर्माण, चहार-दिवारी निर्माण के कार्य शुरू हो रहे थे। कुछ

पंडित निश्चित रूप से बाबा रखने लगे थे। जलावन पर एक संध्या उनलोगों का भोजन बनता था। धीरे-धीरे लोगों में रहने, वास करने की कामना बनती गयी, आदेश मिलता गया। सबसे पहले अत्यंत प्रार्थनापूर्वक अनुमति माँगने पर एक पंडितजी को उनकी सुविधा के लिए किरासन तेल पर स्टोव जलाने की अनुमति मिली **यानी किरासन तेल पर खाना पकना शुरू हुआ जो बाबा के विधान के मुताबिक अशुद्ध था। लेकिन बाबा ने ढिलाई दे दीं।**

विशेषकर समझने, ध्यान देने, का यह सबसे महत्वपूर्ण बिंदु है कि **बाबा बिना ब्राह्मण के नहीं रह सकते थे। बाबा और ब्राह्मण के बीच के संबंध, भाव, धारणा के संबंध में अलग-अलग ग्रंथ समर्पित किये जा सकते हैं।** लोगों की पहुँच से बाबा भागते थे, बाबा छिपकर रहते थे परंतु वहाँ पहुँचे हुए आर्त्तों को सुनना भी बाबा का स्वभाव था। आते-जाते लोगों को रहने का आदेश मिलने लगा, दिन-दो दिन लोग ठहरते गये, **नवाह बिताने, कल्याण पाने का, भेद-रहस्य खुलने लगा।** परिसर में अब रात में दीप-लालटेन दीखने लगा। बाबा की कुटिया में भी तिल के तेल, सरसों के तेल में दीप जलने लगा। आरती जाने लगी। सर्प, बिच्छू, बंदर के क्रीड़ा-स्थल में निःस्संक लोग रात-दिन बीताने लगे। जहाँ शाम के बाद पंडा भी नहीं

रहने का साहस करते थे, निःश्शंक रात में भी लोग शौचादि के लिए अब वाह्य प्रदेश जाने लगे। रात-रात भर बैठकर भजन-जप करने लगे। गहड़े-गहड़े संकट से बाबा फलाहार कराकर, एक शाम भोजन पर रखकर, वासुदेव (पीपल) में जल चढ़वाकर, ब्राह्मणों को दान दिला संतुष्ट करा त्राण दिलाते थे। अपने साथ भक्तों को बैठा-बैठाकर अब मनरंजनकारी प्रसंग, कथाएँ, विभिन्न प्रसंग सुनाते थे। अपने साथ बीती कथाएँ भी सुनाने लगे। एक-एक बात से ईश्वरीय मार्ग, ईश्वर के सेवक की गति, दैवीय अवधारणाओं पर आस्था का ज्ञान मिलता था। अनाप-शनाप की बातों में समय बीताने का जैसे संयोग ही नहीं बनता था। **बस, बाबा प्रसन्न हों, प्रसन्न हो जाएँ, किस तरह रहें कि बाबा प्रसन्न हो जाएँ। इसी को समझने, एक-दूसरे से सुनने, गौर करने में, तद्नुकूल रहने के प्रयास में, यहाँ आकर रहने वाले, बाबा के सानिध्य में वास करने वाले लोगों का यही प्रयास रहता था- यही थी साधना और साध्य था बाबा को रिझाना। चिंता, पाठ, समर्पण-जो करो बाबा को समर्पित। हर पृष्ठभूमि के लोग ''श्रवण सुजश'' सुन आने लगे।** आर्त्तों का, दुःखियों का आना-जाना और स्वतः आदेश मिलने पर या आदेश लेने के बाद वहाँ अब लोगों का ठहरना भी शुरू हो गया। **पहले से रह रहे लोग नव-आगन्तुकों के गाइड रूप में हो जाते थे।**

जाने का आदेश नहीं प्राप्त हो सकने के कारण अथवा दूर से आये लोगों के वापस जाने योग्य समय नहीं रह जाने के कारण लोगों को ठहरने का आदेश प्राप्त कराया जाता था।

धीरे-धीरे अनुभव होता गया कि कल्याण हेतु सुयश सुन दूर-दूर से, नजदीक से **आने वाले लोगों को बाबा शरण देने लगे जैसे कि इसीलिए वे थे।** लोग पगले लेकर आते कलना परिसर पहुँचते-पहुँचते, बाबा के दर्शन होते, उपदेश सुनते जैसे पागलपन दूर होने लगता था, निपुत्र को पुत्र मिलने लगे थे, खाने के लिए जिसके पास थाली नहीं थी वह मालो-माल-कारोबार--वाला बनने लगा, अँधा देखने लगा, लंगड़ा चलने लगा, कलना की शुचि-व्यवस्था, **कल्याणेश्वरनाथ का अंतिमाश्रय, बाबा के उपदेश का अवलंबन, स्नान और हनुमान चालीसा-पाठ, सीताराम-सीताराम बस यही था प्रायः ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त कराने का मार्ग। इसी विद्या में अभ्यस्त कराना और विश्वास स्थिर कराना।**

बस एक फूस का पंद्रह-बीस हाथ का घर बाबा की कुटिया से जुड़ा अलग। बाबा के आदेश के बाद उसी में एक शाम सबों का 'भंडारा' 'प्रसाद' बनना और शाम में, देर रात में भोजन बनना।

दिन भर तुलसी पान, बाबा के लिए बाहर से आए चढ़ौना

प्रसाद से पाँच-दस मूँगफली के दाने, तुलसी दल, पकाये-सिझाए कच्चे फल कद्दू, कोहरा,ओल, आलू, आदि में से वहाँ उपस्थित भक्तों को एक अंजुल प्रसाद दे देना-बस यही दिन में मिल जाता था। लोग भोजन के पकाने के लिए आदेश माँगते थे। **आपके पास पैसे हैं लेकिन किसको आदेश मिलेगा कि वह अपने पैसे से चावल, दाल, आलू, जलावन ले आये। इसका एक अलग ही मापदंड बाबा का था जो स्वयं ही वो जानते थे।** सबके बीच किसी-किसी को निराहार रख देते थे और ऐसी दृष्टि मिलती थी, एक-दो तुलसी दल मिल जाता था कि उसकी भूख उसे भूल जाती थी-सता नहीं पाती थी। किसी-किसी को तो नौ दिन, अठ्ठारह दिन एक महीना सिर्फ फल पर, फलाहार पर, रखा जाता था। **प्रायः इसी तरह से प्रायश्चित कराने अथवा विकार-रहित बनाने, शुद्ध करने, तप कराने की बाबा उस पर कृपा करते थे।**

एक बात गौर करने की थी। पाँच-दस साथ हैं। कोई चाहता था कि पूरा भंडारे का खर्चा वही वहन करे। किसी के पास कम ही पैसे अथवा किसी के पास नहीं भी। फिर भी यह सिर्फ बाबा के आदेश पर निर्भर करता था कि खाने का प्रबंध कैसे होगा। सबों के बीच पैसे रहने पर भी बाबा आदेश कर दे देते कि चल-जाऽ, अमुक

गाँव, अमुक आदमी के पास, अतना चावल, अतना दाल दे दी। जिसके पास यह आदेश जाता था वह तो धन्य हो जाता था। बस, जितना ही आदेश है, उससे ज्यादे देकर अपनी उदारता अथवा सम्पन्नता का परिचय देने का दुःस्साहस करने से लोग परहेज करते थे। बस, जो आज्ञा, जितनी आज्ञा, जितनी ही आज्ञा। किसका दाना, किसका पैसा-कैसा है, कहाँ लगाकर किसका उद्धार करना है-यह सब अपनी लीला लीलाधारी स्वयं जानते थे। अहंकार का नाश! भोले का भोजन।

पंडे अब धन्य-धन्य रहने लगे। उन्हें तो माँगने का सनातन अधिकार है। महादेव का दरबार तो उन्हीं का है। उन्हें प्रसन्न करना है। पंडे भजते हैं उनको तो भजायेंगें किनको। ठोप लगाना चंदन लगाना, जल चढ़ाने, शिवजी से पूजा कर देने के नाम पर दर्शनार्थियों से दक्षिणा, चढ़ौना माँगने का अवसर उन्हें खूब बढ़ता मिलता गया। बाबा भी आदेश देते थे कि पंडा के कुछ दे दऽ। पंडे भी वेश-भूषा को देखकर बाबा से गुहार लगाते थे कि बाबा ई पैसा वाला है-हमको वाबा इतना पैसा दिला दीजिए-आज कोई उपाय नहीं है। बाबा सुनते रहते थे।

फिर पंडित! बाबा तो पंडित को बिना साथ रखे रह ही नहीं

सकते थे। पंडित और पंडे के माध्यम ही प्रायः शिवजी के प्रसन्नार्थ, पापों के शमन का, कामनाओं की अभिपूर्त्ति का प्रायः उद्धार-चक्र-चालन था। पंडितों को तृप्त करो, प्रसन्न करो, उनसे दुर्गा-पाठ, रामायण-पाठ करवा, हनुमालीसा-पाठ करवा उचित दक्षिणा, भोजन, वस्त्र देने का आदेश दिया जाता था। इस तरह जिस पंडित को अपने आश्रय में बाबा रहने कह देते वह कौन अस्वीकार कर सकते थे, यह तो उन्हें अपने सु-दिन शुरू होने का बोध कराता था। घर-परिवार की चिंता सब बाबा पर अर्पित करते दो-चार पंडित बराबर बाबा के साथ रहते थे। अब किसको कैसे रख रहे हैं, बाबा की कृपा है। बिना भोजन के, बिना दक्षिणा के, बिना पाठ के। कौन आयेगा, किसको किस पाठ का आदेश मिलेगा, फिर वह किस पंडित को दिया जायेगा-यह बाबा ही जानते थे। इसमें अधीरता, बैचेनी, चिलमिलाहट के बीच पंडितों को आपसी राग-द्वेष से रहित बाबा के सानिध्य में उनके प्रीत्यर्थ पूजा-पाठ करते सभी पंडितों का साथ-साथ रहना होता था।

फाँसी की संभावना, जेल का भय, कैंसर से मुक्ति, नौकरी-प्रोमोशन, कलह, भय, रोग निर्धनता, दरिद्रता, लड़की शादी, मकान बनाना-उस संकट-मोचन के दरबार में सब संकट का निवारण

होता मिलता गया। **परंतु जो पैसे वाले आये कि पैसे के बल पर बाबा की कृपा, पंडा, पंडित को प्रसन्न करते, दान, और पैसे के प्रभाव का उपयोग कर बाबा की कृपा प्राप्त की जाती है उन्हें भिन्न-भिन्न तरहों से टूटते, सीखते पाया गया। निर्बल निराश्रय होकर निर्मल मन से जो आया, प्रायः वही सुना गया। ''निर्मल मन जेहि सो मम भावा'' बाबा बराबर कहते थे।**

एक भी दूकान एक कि०मी० दूर तक नहीं थी। बस एक दूकान मैंने देखी चूरा दही, जिलेबी, मूढ़ी आदि की जो सुबह में 12 बजे तक रौदीजी की दूकान खुली रहती थी। कलना में वास करने वाले, बाबा के सानिध्य में रहने वाले तो दूकान पर बैठकर, कुछ लाकर परिसर में खाने का सोच भी नहीं सकते थे। परिसर के बाहर बस एक यही दूकान थी जो आज भी रौदीजी के बेटे राम विलासजी, राम अवतार जी, इन्दर जी चलाते हैं। बस वैसे ही मेले के दिन, खासकर रविदिन, दूकानदारों की संख्या बढ़ जाती थी।

यही थी उन दिनों के कलना की उसकी प्राकृतिक स्थिति जिसमें पंडे भी शाम के बाद परिसर में रहने में डरते थे। तपस्वी रूप में ''कल्याणेश्वर धरि सगुनहिं वेषा'' बाबा के कलना-पदार्पण के साथ परिसर रात-दिन, अहर्निश रहने के योग्य लोगों के लिए

निर्भयता की जगह बनता गया। बाहर से डरे हुए आए लोग यहाँ, **परिसर में आकर, बाबा के सानिध्य में आकर, निर्भयता प्राप्त करने लगे।** लोगों के आने-जाने, रहने-ठहरने, बाबा के साथ वास करने की आरजू-विनती के सामने बाबा ''ढ़िलाई'' देने लाचार लगने लगे। **अनिष्ट भी, काल भी उनके परिसर में नहीं झाकते थे।** प्रारंभिक दिनों में जहाँ बाबा लोगों की पहुँच से दूर रहे थे, अब लोगों के बढ़ते जा रहे ''मेले'' के बीच कहने लगे **''ना अब ए देश मे ना रहब''** और 1992 के .... को अपनी देहधारी लीला को विराम दे ही दिया।

* * *

''बाबा परमहंसजी गंगाजल मँगै छैथ''

(सोमवारी बाबा, देवघर)

आज भोलेनाथ की नगरी वैद्यनाथ धाम में परमधामलीन प्रात: स्मरणीय काँवरिया-बम के सिरमौर सोमवारी-बाबा की याद आ जाती है। सोमवारी बाबा के विषय में ऐसा जाना जाता है कि आपने एग्यारह या बारह वर्ष प्रति सोमवार को बाबा बैद्यनाथ को काँवर के जल चढ़ाया। गंगोत्री से भी पैदल गंगाजल लाकर दो बार बाबा भोलेनाथ को गंगा जल चढ़ाया था। एक बार सौभाग्य से सोमवारी बाबा के चरण मेरे घर पर भी पहुँचे। मेरे गाँव के प्रत्येक काँवरिया बंधु को प्राय: सोमवारी बाबा जानते थे-उन्हें तो सब जानते ही थे।

एक दिन बाबा परमहंसजी के दरबार में सोमवारी बाबा भी कल्याणेश्वरनाथ महादेव, बाबा परमहंसजी के दर्शनार्थ कलना पहुँचे हुए थे। मैं भी वहीं था। मुझे गौर करने के लिए मिला कि अन्यान्यों से भिन्न बाबा ने आदर-सूचक संबांधन से ''अपने'' (आप) कहकर सोमवारी बाबा का संबोधन किया था।

पूज्य बाबा परमहंसजी के शरीर-त्याग करने के बाद देवघर में ही सोमवारी बाबा ने मुझे मेरी अपनी जिज्ञासा को शांत करने के क्रम में कहा था कि ''बाबा परमहंसजी गंगा-जल मँगै छथि''।

हुआ ऐसे कि घर से पहली बार काँवर लेकर देवघर जाने के बाद जब दूसरे साल काँवर लेकर देवघर आने का समय आया, मैंने बाबा से आज्ञा माँगी। बाबा ने मुझे कुछ ऐसा जवाब दिया कि काँवर लेकर जाने की बात ही मेरे मन से सदा के लिए दूर हो गई। **शुचिता और समर्पण से बाबा परमहंसजी के दरबार में प्रशिक्षु की भाँति सेवक की, काँवरिया की, पात्रता अर्जित करना ही समझ में आया कि मेरे लिए सबक (टास्क) है। सबकुछ तो बाबा स्वयं ही हैं।** हाँ एक बार मैं एक सम्मेलन में शामिल होने बाबा से आज्ञा प्राप्त कर देवघर आया था। देवघर से चलते समय बाबा के नाम एक पीतल की जलधरी ले ली थी। सिमरिया से बाबा के लिए उसी में गंगाजल भरकर बस से कलना लेकर गया था। बाबा ने गंगा-जल कलना के शिव-गंगा में प्रवाहित करवा दिया। स्वयं गंगा-जल पान नहीं किया। मैं समझ गया कि बाबा स्वयं नहीं पीये। प्राय: इसलिए नहीं पीए कि गंगाजल सवारी पर सवार होकर मैं ले गया था।

बाबा के शरीर छोड़ने के उपरांत, काँवरिया बन्धुओं के बहुत

प्रेरित किए जाने पर मैं भी काँवर लेकर देवघर आया और वही दोनों जलधरी थी। वैद्यनाथ को जलार्पण करने के बाद मुझे याद आया कि इसी जलधरी में जल लेकर बस आदि से यात्रा करते मैं कलना जल लेकर गया था तो बाबा ने स्वयं नहीं पीया और आज उसी जलधरी से मैं बाबा वैद्यनाथ को जल चढ़ाया हूँ। मेरे मन में भाव आ गया कि उचित है कि इसी जल-धरी से काँवर-माध्यम बाबा परमहंसजी को भी जल पहुँचाया जाय। जलधरी तो प्रथम उन्हीं के लिए ली गई थी। **और उस बार जल बाबा स्वयं नही पीये चूँकि काँवर माध्यम नहीं गया था।**

विचार तो ऐसा आ गया-लेकिन इसमें साथ तो मेरा कोई नहीं देता। फिर अकेले की यात्रा। सुल्तानगंज से जितना दूर देवघर है उससे लगभग दूने की दूरी सिमरिया घाट से कलना की है। बात बड़ी कठिन, साहस-साध्य, लगने लगी। बड़ी विचित्र मन की स्थिति बन गई। अब चैन नहीं था। इसी मनोदशा के साथ मैंने सोमवारी बाबा से वहीं भेंट की, उनके चरण छूए और मन:स्थिति उनके सामने निवेदित कर दी। उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा ''बाबा परमहंसजी गंगाजल मँगै छथि''। मैंने जब अपनी स्थिति कही तो उन्होंने कुछ मार्ग-दर्शन दिए और कहा **''अहाँ जाऊ ने, बाबा अहाँ के मददि करता। अहाँ सिमरिया स कलना काँवर लऽ कऽ पहुँच जायव''।**

उनके ही निर्देशानुसार घर आया। काँवरलेकर जाने में विलंब होता गया। कुछ दिन बाद स्थितियाँ ऐसी बनती गई कि आलस्य अथवा समयाभाव के कारण कलना काँवर लेकर जाने में हुए विलंब का मुझे ख्याल आने लगा। मैं चल दिया-गाड़ी से सिमरिया आया और सिमरिया से काँवर-जल लेकर चल दिया कलना के लिए। बिल्कुल अकेले।

अगले बुध दिन बाबा की जयन्ती मनाई जा रही थी। मुझे इसका कोई ख्याल भी नहीं था और कोई जानकारी भी नहीं थी। काँवर लेकर बारह बजे उसी दिन, उसी पुण्य मुहुर्त्त में, कलना धाम पहुँचा। परिसर में प्रवेश किया कि स्व० रामगुलाम दास जी ने मुझे देखा काँवर लेकर गंगाजल लाये हुए। उन्होंने मुझे जानकारी दी कि बाबा का जन्मोत्सव मनाया जा रहा था। बाब की आरती होने जा रही थी। भोग लगने जा रहा था। बस वही गंगाजल उस जयन्ती के अवसर पर आरती के साथ बाबा के भोग हेतु बाबा को समर्पित कर दिया गया। उनके भोग में हाजिर कर दिया गया। वहाँ उस पर्व में सामिल, एकत्र हुए, सभी भक्तों को गंगाजल प्रसाद रूप प्राप्त हुआ।

ऐन मौके पर काँवर लेकर पहुँच जाने से मुझे भी ऐसा एहसास हुआ कि बाबा ने प्रायः जल स्वीकार कर लिया।

''जय बाबा''

> ''जाकी रही भावना जैसी प्रभु मूरति देखी तिन तैसी''
>
> काँवर माहात्म्य

बस लिखने के क्रम में यह बोध आया है कि बाबा परमहंसजी तो काँवरियाँ भाईयों के आराध्य बाबा बैद्यनाथ के ही किन्हीं रूपों में एक थे। ''आशुतोष धरि सगुनहिं वेषा''।

मैं पहली बार दर्शनार्थ कलना पहुँचा था। **बस पहली बार बाबा बैद्यनाथ को काँवर चढ़ाने के प्रतिफल, प्रसाद स्वरूप, ही मुझे यह सौभाग्य मिला। एक-दो स्थितियाँ ऐसी-ऐसी आयीं जिनसे मुझे यह एहसास कराने की कृपा बाबा ने मेरे साथ शुरू में ही कर दी थी कि जिनकी आरती मंदिर में होती है, मैं ही हूँ। सर्वव्यापक हैं, अंतर्यामी हैं-ऐसा तो एक-दो स्थितियों में बोध कराने की कृपा मेरे साथ पहले हो ही गई थी।** पुनः दूसरे साल काँवर लेकर देवघर जाने का समय जब नजदीक आ रहा था, एक दिन बाबा के सामने विनयपूर्वक मैंने अपने मन की इच्छा व्यक्त की और कहा ''बाबा। लोग मानते हैं कि कम-से-कम तीन बार एक क्रम में काँवर लेकर जाना ही चाहिए। मैं पीछले साल काँवर लेकर देवघर गया था। इस बार लोग पुनः जा रहे हैं, मैं क्या करूँ?'' पूज्य बाबा ने तुरंज जवाब दे दिया ''मोन ना मानलक ह''? **बाबा की यह**

वाणी जैसे सीधे मेरे अन्तःस्थल में प्रवेश करते मुझे विश्वास जगा दिया कि बाबा बैद्यनाथधाम की हाजिरी कलना से ही ले रहे थे।

वास्तव में, **काँवर यात्रा के अमोघ फल के रूप में ही ऐसा हुआ कि मुझे बाबा परमहंसजी महाराज के श्री चरणों में स्थान, शरण प्राप्त हुआ। और काँवर-यात्रा के मार्ग में पालित-अनुपालित शुचिता सहित अन्यान्य नियमों-परिनियमों का ही मेरे साथ आधार-बल था कि मैं कलना का कृपाभाजन बन सका।**

काँवर के रास्ते में हमेशा चिंता-पूर्ण, भार-पूर्ण असंभव सा दिखता रहता है कि बम काँवर-सहित अपने बल पर देवघर पहुँच सकेगा? रास्ते में प्रतिदिन बारंबार ऐसी स्थिति आती है कि काँवरिया हिया हारने लगता है। फिर लाल-बम एवं अन्य बम को सरदार बम ज्ञान कराते हैं। ''**बोल-बंम**'' के नाद के साथ हारते हुए काँवरिया की दर्दपूर्ण आवाज जा-जा कर बाबा के द्वार से टकराती है, अपनी दस्तक देती है। दिक्कत रास्ते में अधिक होने पर शुचिता के निर्वहन की समीक्षा की जाती है। बस, ''**बोल-बम**'' के मंत्र के बल, सुचिता के आधार ''**बाबा एक तेरा सहारा**'' भाव में बाबा आखिर

अपना सहारा देते भक्त की कामना पूरी कर देते और काँवर सहित काँवरिया देवघर पहुँचकर जल निशाल कर ही लेता है। बस **मंत्र का बल, शुचिता का आधार, बाबा एक तेरा सहारा और संपूर्ण रास्ते कान पकड़-पकड़कर उठते-बैठते दंड देते किसी भी भूल-चूक के लिए माफी माँगते।**

ठीक इससे भिन्न कुछ नहीं। कलना में एक-एक घड़ी बितना, शुष्क, विरान भयावह जगह में एक बाबा की रक्षाकरी शक्ति का भरोस, सीताराम-जपन, हनुमान चालीसा पाठ का अवलंबन और बाबा की कृपा पर विश्वास कि कलना में किसी का भी वास संभव हो पाता था। न खाने का ठीक, न जल-पान नाम की चीज की भी खोज, न साबुन लगाना, न तेल लगाना, भूमि शयन, जाड़े-गर्मी में बाबा की कृपाजनित स्थान की वातानुकूलितता। राजा-रंक, साथ में। थैली पैसे से भरे और एक भी पैसे किसी के पास नहीं रहे-सब को 'भंडारा' हेतु आज्ञा के लिए बाबा के आदेश की प्रतीक्षा। दो-दो शाम बाबा के दिये दो-चार पत्ते तुलसीदल पर रहना, पोखड़े का जल पीना।

कलना के संदर्भ में मैं तो बारंबार कहूँगा कि डरने की ऐसी-ऐसी बातें वहाँ के संबंध में सुनी जाती थीं कि वहाँ-पूज्य श्री के चरणों में रहना बिना उनकी रक्षाकरी कृपा के संभव नहीं था।

बात अभी बहुत पुरानी नहीं है। आज का वह कलना जो आज तक हुए यहाँ के विकास कार्यों एवं देश के कोने-कोने में फैली जन-श्रुतियों के कारण पर्यटन-स्थल हेतु चयनित आज भव्य एवं आकर्षक लग रहा है, उन दिनों कंटकाकीर्ण झाड़ियों से भरा और इसकी सड़क आपदा से, संकट से खाली नहीं थी। भयंकर-भयंकर सर्प मंदिर के इर्द-गिर्द, सड़क पर नजर आते थे, फिर सिर्फ बंदरों का बाहुल्य था। इमली के, आम के पेड़ थे। कहीं चहारदिवारी नहीं थी। दिन के समय दर्शनार्थी आते और कल्याणेश्वरनाथ के दर्शन कर चले जाते। पंडे भी रात में मंदिर परिसर में नहीं टिकते थे। ऐसी जगह बाबा परमहंस जी महाराज स्वप्न में, गिरिजामाई से, कलना में रहने के आदेश पाकर आकर रहने लगे। जगत-विदित है बाबा कच्चे इमली, इमली के पत्ते, कच्चे कद्दू, कच्चा ओल, कच्चे फल खाकर उसी पोखड़े का पानी पीकर रहते थे। जन्म-जात सिद्ध अवतारी बाबा जाड़ा-गर्मी, भूख-प्यास तक से जैसे कभी प्रभावित ही नहीं होते थे। **हाड़-माँस की अपनी देह की रक्षा हेतु नहीं बल्कि लोक-मर्यादा के अनुकूल ''दिगंबर'' एक टूकड़े मात्र पहनने को रखते। तब प्रश्न उठता है जो जगह कलना की ऐसी थी-भयंकर सर्पों से भरी, बानरों का क्षेत्र--बाबा कैसे रहते थे और रह गये? स्पष्ट**

है कि या तो संत की इनकी दृष्टि ने सबों को अहिंसक बना दिया अथवा सर्प, बिच्छू, वानर सव इनके वाहन ही थे। अपने देव के साथ, जैसा प्रभु का संकेत, वे वैसे बरतते गये।

लोग बराबर कहते हैं फिर चालीसा पाठों में ऐसा आता है-

बरिस अनेक घोर तप कीन्हा,
आपन तेज संभु तब दीन्हा।

***

महावीर अवतार तिहारा

बाबा परमहंस जी तो अवतार ही थे। जन्म से ही सिद्धियाँ इनकी सहवासिनी थी। तपस्वी का इनका स्वरूप था। इनका स्वभाव ही था तप का। ऐसा नहीं कि इन्होंने साधना की और इन्हें सिद्धि मिली। बाबा तो जन्मजात सिद्ध थे।

सात-आठ वर्ष की अवस्था में ही पूज्य बाबा को जब पिताजी ने गाय चराने भेजा था, बाबा पेड़ के तले बैठकर राम-राम भजन करने लगते थे। जब पिताजी इन्हें गाय चराने भेजते थे बाबा कहीं बैठकर 'राम-राम', 'शिव-शिव' भजन, जपन, करने लगते। एक दिन वे बैड़ के पेड़ के तले बैठे थे कि बैड़ के पेड़ से एक बैड़ का फल गिड़ा। उन्होंने उसे उठा लिया आकर अपनी चाची से देकर उसे खा लेने कहा। कहा ''ले गे चाची। ई खाले। तोरा बेटा होई।'' उनकी चाची निःस्संतान थी। बस, वर्ष दिन में उन्हें एक सुपुत्र ने जन्म लिया। यह प्रभाव क्या उनका तप-बल से प्राप्त था या जन्मजात था। विचार किया जा सकता है।

पूज्य बाबा की जन्म-स्थली अमही मैं दो बार गया। दोनों बार

बाबा के जन्म-स्थान के दर्शन, निरीक्षण की अभिलाषा थी। अगल-बगल के गाँव-पड़ोस के लोगों से संपर्क किया परंतु कुछ भी वहाँ के लोग तथ्यपूर्ण बाबा संबंधी सूचनाएँ नहीं दे पाये। लोगों के बीच ऐसी जानकारी है कि उन्हीं के वंश-कुल, गाँव-इलाके के प्रयागसुत ठाकुर शुक्ल बाबा 'बोलते महादेव', विश्वंभर के रूप में मिथिला में पूजित एवं प्रख्यात हैं। दो-चार सार्वजनिक संस्मरणों के अलावे वहाँ के लोगों से और कुछ नहीं जानने योग्य हुआ। उन्हीं संस्मरणों में सर्व-ख्यात है एक चर्चा। बालक ठाकुर शुक्ल ने अपनी निःस्संतान चाची को वर दिया जिससे वो निहाल हो गई। फिर कहिए जब पारंपरिक शिक्षा-दीक्षा हेतु उनकी व्यवस्था पिताजी ने की, स्थानीय शिक्षक के पास भेजा तो गुरूजी उनसे ''रामा गति, देहु सुमति'' लिखने को कहते थे। बच्चे बाबा को उस पढ़ाई-लिखाई से कोई रुचि नहीं थी। दिनों-दिन बाद तक जब गुरूजी उन्हें कहते लिखो ''रामा गति, देहु सुमति'' तो बाबा ही उन्हें कहते ''हां गुरूजी। ई सब को कहऽ लऽ। 'राम-राम' कर। **अंदाज किया जा सकता है कि पढ़ाने में असफल बना रहे ऐसे उपदेशक बच्चे के प्रति गुरूजी की कैसी धारणा बनती गई होगी।** फिर ये इन्हें लिखने कहते तो वह बालक किसी कोने में जाकर राम-राम भजन करने लगता,

लेकिन एक दिन तो बालक शिष्य ने गुरूजी की जैसे दृष्टि ही प्रभावित कर डाली।

इनके गुरूजी स्व० इन्द्रासन तिवारी गाँव के ही थे। बड़े धनी थे। **गुरूजी के बालक ठाकुर शुक्ल-हमारे बाबा-गुरूजी के बड़े भक्त थे।** एक बड़ा ही उपदेशमूलक संस्मरण स्वयं बाबा अपने श्रीमुख से गुरूजी से प्राप्त आशीर्वाद के संबंध में लोगों को सुनाते थे। गुरूजी का सूद का कारोबार बड़ा ही व्यापक स्तर पर था। बाबा को उनके पिताजी ने गुरू के ही घर पर रहकर पढ़ने छोड़ दिया था।

एक दिन बाबा किसी पोखड़े में नहाये थे। इनकी देह में पूरे जोंक सटे रह गये थे। वैसे ही देह पर जोंक के साथ बाबा गुरूजी के घर आये। गुरूजी ने देखकर डाँटा और कहा रे लड़का-सब जोंक को देह से छुड़ाओ। लेकिन बालक ने कहा **''गुरूजी, अपने के घर के दाना सूद के दाना बा। हम जे अपने के दाना खैली हँ ओ से बनल खून जब जोंक चूस लीऽ तऽ अपने देह छोड़ दी।''** पंडितजी अचंभित, हत-प्रभ रह गये। उन्हें ज्ञान आ गया। वे उल्टे पाँव अंदर अपने आँगन गये, परिवार से कहा आज के दिन से इस परिवार में सूद का कारोबार नहीं होगा। परिवार वालों को हिदायत दे दी, शपथ ले लिया। उनके नाती-पोते सूद के कारोबार से कोई सरोकार

नहीं रखने लगे। आज भी भक्ति-भाव पूर्ण ढ़ंग से वे बाबा की पूजा करते हैं।

यज्ञोपवीत संस्कार होने के पहले ही निःस्संतान चाची को फल देने की जगचर्चित घटना के अलावे अपने गुरूजी को व्यवृहार से विस्मृत ज्ञान की यह शिक्षा स्मृत करा देना क्या सात-आठ साल के बच्चे की तपस्वी की गति थी? नहीं, यह तो **अवतारी बालक की लीला-स्थिति थी जिसकी दिशा स्वप्न माध्यम रामजी से पाये आदेशानुसार अयोध्या दर्शन, फिर स्वप्नादेश से ही जनक-पुरधाम एवं गिरिजा स्थान होते लीला स्थली कलना पहुँचने की थी।**

फिर एक घटना अमही ग्राम के लोगों को चौंकाने वाली थी। उसी इलाके में, नजदीक में ही कोई संत थे जिनकी शोभा-यात्रा हर साल अनोखे ढ़ंग से चलती थी। संतश्री की पालकी के पीछे इलाके के हाथी, घोड़े, ऊँट, आदि वाहनों का ताँता रहता था और रास्ते के दोनों ओर हाथ-जोड़े नर-नारी, वृद्ध, बाला, सब दर्शनार्थ खड़े रहते थे। इसी बीच में कहीं बालक ठाकुर शुक्ल हमारे बालक-बाबा भी भीड़ में खड़े थे। दर्शनार्थ लम्बी-लम्बी कतारों में खड़े सब यह देखकर भौंचक रह गये कि पालकी में आसीन उस संतश्री ने अपने

दोनों हाथों से बालक ठाकुर शुक्ल का अभिवादन सिर नमाकर पालकी में बैठे ही बैठे कर लिया। इसे वे ही देख सके अथवा समझ सके **"सोइ जानइ जेहि देहु जनाई,**

ये सारी बातें ऐसी हैं जो जन्म-काल से ही बाबा के संबंध में लोग कहने लगे कि लड़का अवतारी है। यह श्रुत है एवं सर्व सम्मत भी है।

"कलना" बाबा कालका

बाबा को देखा-पैड़ छुआने, प्रणाम करने देने से बिल्कुल भागते थे। लोग इनके नजदीक़ जाने का साहस ही नहीं कर पाते थे। शुचिता, आंतरिक पवित्रता की कौन सी स्थिति किसकी कैसी उनके मापदंड में आती थी, उनकी अपनी लीला थी। बहुत बाद में, जब उनके कुटिया में तीसी अथवा कडुआतेल अथवा घी का दीप भी जलने लगा, लोगों का आना-जाना, एक माध्यम दूसरे-ऐसे-ऐसे कामनार्थियों का आना-जाना बढ़ता गया। धीरे-धीरे नियम सब-स्वाभाविक-ढ़ील पड़ते गये। फिर भी किसी से भी कोई सेवा-दूसरे के हाथों अपने टुकड़े खिचवाना, फलाहार के बर्त्तन मलवाना आदि-आदि बाबा नहीं स्वीकर करते थे। लोग आतुर रहते थे कि किसी को सेवा का मौका मिले। जब शरीर से कभी-कभी अस्वस्थ हो जाते-और

कोई अस्वस्थता नहीं-सिर्फ दाँत का दर्द, पैड़ में मचोड़-तो फिर लोगों को मौका मिलने लगा सेवा करने का।

कभी-भी बाबा के टुकड़े (मात्र एक टुकड़ा हाथ दस हाथ का बाबा पहनते) में साबुन, सोडे का व्यवहार कभी हुआ ही नहीं। उनके जीवन में कभी भी प्रायः (प्रायः नहीं, निश्चित रूप से नहीं) उनके कपड़े के धोने में साबुन, सोडे का उपयोग नहीं हुआ। उनके शिव-गंगा पोखड़े में भी, धोखा से भी, किसी ने साबुन लगाने, अथा साबुन से नहाने का अपराध नहीं किया। इसके लिए विशेष सेवक ''मनाही'' करने के लिए तैनात रहते थे।

परिसर एवं पोखड़े की शुद्धता, पवित्रता निर्वहन के दृष्टिकोण से, आज तक यह नियम, परहेज अक्षुण्ण रूप से पालित हो रहा है।

बाबा के किसी तरह अस्वस्थ रहने की स्थिति में कभी भी ऐलोपैथिक दवा क्या आयुर्वेदिक दवा तक का व्यवहार नहीं हुआ। **उनके बिमार-अस्वस्थ रहने की घोषणा का कुछ अलग अर्थ लगाया जाता था।** सेवक, डाक्टर लोगों में किसी ने यदि चिकित्सा और दवा के माध्यम बाबा को स्वस्थ करने का सोचा तो उन्हें दवा के साथ या चिकित्सा के नाम पर बाबा तक पहुँचते-पहुँचते उल्टे, विपरीत ही अनुभव होने लगता था। **स्वयं वैद्यनाथ को कैसी चिकित्सा चाहिए थी ?**

माँ शारदा देवी का उद्घोष कि **मैं तो दुष्ट, दुरात्मा और सज्जन-संत सबकी माँ हूँ-पूर्णतः बाबा में चरितार्थ थी।** आहभरी **पुकार, त्राण के लिए त्राहिमाम की नाद, दया की, क्षमा की भीख माँगने की याचक की स्थिति चाहिए।** फिर कौन अच्छा-कौन बुरा। किसी भी पृष्ठभूमि, किसी भी छवि के व्यक्ति के लिए बाबा के यहाँ आश्रय था, स्थान था। **वादी-प्रतिवादी दोनों एक साथ, बाघ-बकरी एक साथ।**

परंतु बाबा ने ''कान पकड़कर उठने-बैठने'' की स्थिति किसी की नहीं बनने दी। आत्म-ज्ञान, आत्म-शोध, आत्म-मंथन के लिए अवलंब बनते सबों को परि-शोधन एवं अपने-अपने आत्मिक उन्नयन का मार्ग दिया।

विकास-कार्यों ने रूप पकड़ना शुरू किया। सिर्फ जहाँ कल्हुआ के पेड़े हुए तेल, बिना खाद की उपजाई सब्जियों की स्वीकृति थी, उस परिसर में धीरे-धीरे छूट मिलती गई और लाचारी, विवशता की स्थिति दवे-दवे लोग परिसर में चाय तक भी व्यवहार में लाने लगे। शुद्ध-शाकाहारी व्यंजन भी समय-समय पर बनने लगे जहाँ कि बाबा कहते थे **''ऐ. जग, छौंक-छाँक के की काम ह''।**

कम-से-कम डर कर भी इन्द्रिय-संयम करो कि हम बाबा के परिसर में बाबा को जो पसंद नहीं वह भोजन, वैसा भोजन, तड़क-भड़क,, शौक-प्रदर्शन, हैसियत पूर्ण, विलासिताप्रभृतिक रहन-सहन नहीं करेंगे। बाबा ये पसंद नहीं करते हैं।

जूठा की अवधारणा तो कलना में और ही सूक्ष्म एवं कठोर थी। जिस थाली, पात्र में खाए उंसे मिट्टी से पूर्णतः धोया जाय ताकि उच्छिष्ट भोजन का एक कण भी चिपका न रह जाय। तुलसी पान भी करने से पहले जल से हाथ धो लें और तुलसी पान करने के बाद हाथ नहीं धोया तो देव-कर्म के योग्य शुचि नहीं रही। हाथ से कोई चीज सूँघा भी तो हाथ धो लो। यह तो पूज्य बाबा के सानिध्य में, उनके सन्निकट बैठने वाले रहने वाले के लिए शुचि के आयाम थे। उनकी सेवा करने वाले, साथ में रहने वाले सेवक की सचेष्टता इसी तरह शुचिता रखने अथवा जूठा का निमज्जन करते रहने में रहती थी। समय-समय पर पूज्य श्री ने अपने संकेतों द्वारा, इन सभी स्थितियों में हाथ धोकर पवित्र रहने का पाठ पढ़ाया। परिसर में खाने हेतु भोजन पकाने हेतु परिसर का एक भाग अलग ही कर रखा गया। पोखड़े के सभी घाटां पर कांई भी जूठा नहीं कर सकता। पोखड़े के तीन प्रशस्त

घाटों में सबसे अलग का एक घाट, खाने, बर्त्तन साफ करने जूठा धोने के कामों के लिए अलग से चिन्हित है। और जगह तो धोखे से भी किसी के खाने की स्थिति नहीं आ पाती। यदि अज्ञानता के कारण किसी नें खा भी लिया तो उस जगह चारां तरफ बाल्टीन के बाल्टीन पानी से उसे साफ किया जाता है।

इस तरह जूठे से निमज्जन एवं इसका सावधानीपूर्वक परिपालन कलना की महती विशेषताओं में एक विशेषता है।

एऽ जग-बैठलो वाम न जाई

इसी तरह का रहना इस तपोभूमि पर रहना तपस्या सी होती है। बाबा ने अपने श्री मुख से हमेशा ऐसा कह-कहकर शास्वत अवदान लोगों को दिया कि **''कलना में बैठलो वाम न जाइ''। अर्थात् जो यहाँ रहकर, यहाँ की मर्यादाओं, मान्यताओं का अनुपालन करते अपनी व्यथा के साथ रहेंगे उनके कष्ट का निश्चित हरण होगा। यह पूज्य बाबा की दी हुई वाणी है, प्रसाद है जन-जन के लिए शास्वत अवदान है। जरूरत है विश्वास की।**

''कलानेश्वरनाथ से खाली हाथ वापस कोई न गेल''

आश्चर्य की बात है, बड़ा रहस्यपूर्ण है, शोध-मूलक है यह

विषय और यदि कहीं किसी तीर्थस्थान के लिए यह सत्य है तो कलना के लिए और बाबा परमहंसजी के आश्रितों के लिए यह सत्य कैसे नहीं है? बाबा विश्वनाथ की पावन नगरी काशी के भाई बबलू दा को बाबा विश्वनाथ से क्या नहीं मिला कि उन्हें कल्याणेश्वरनाथ महादेव बाबा परमहंसजी से मिला और मिल रहा है? काशी विश्वनाथ के मंदिर से मात्र एक किलोमीटर दूर भाई बबलू का निवास-स्थल है। परंतु **''श्रवण सुयश सुनि आयऊ प्रभु भंजन भव भीर'' बबलू दा आए तो बाबा के ही होकर रह गए और यहीं से उन्हें काशी विश्वनाथ की पूजा-अराधना का भी मार्ग मिला और सर्वप्रकारेण आध्यात्मिक संरक्षण, आध्यात्मिक तुष्टि मिल रही है।**

ऐसे ही जो भी पहली बार अपनी जिस बात के लिए कलना आया होगा, निराश नहीं लौटा होगा तो आगे भी नहीं निराश लौटेगा। ऐसा विश्वास निश्चित रूप से किया जाना चाहिए। स्वयं बाबा की यह वाणी है। यह आश्वासन है।

अब जब शरीर से बाबा देखने को हमें नहीं मिल रहे हैं, **उनके द्वारा स्थापित विधियाँ, पालित परंपराएँ ही हमारी योग्य मार्गदर्शिका हैं। इन्हें भूलने में ही हमारा भटकाव होगा, हम मार्गच्युत होंगे एवं अपने अभिष्ट की प्राप्ति से वंचित रहते**

जायेंगे। उन्हीं परंपराओं के निर्वहन एवं श्रुत-सम्मत परिपालन में हमारा कल्याण है।

अपने हेतु उनका अवलंब करते हुए हम आने वाली पीढ़ी के सेवकों के हेतु पूज्य बाबा द्वारा स्थापित भक्ति-मार्ग के राज-मार्ग के आलोक के संवाहक बन सकते हैं।

इसी क्रम में एक दिन की बाबा की उक्ति याद आती है जो काँवर-यात्रियों के प्रसंग में था। हम ऐसा मानकर चलते हैं वैद्यनाथ धाम मंदिर में भक्तों के, काँवरियों के जलग्रहण करने वाले बाबा वैद्यनाथ एवं बाबा कल्याणेश्वरनाथ परमहंसजी में कोई अंतर नहीं था। एक दिन मेरे सामने भी बाबा की वाणी निकली थी ''लोग काँवर लेके जा ला आ' कि लैस करे जाता''। **सकारात्मक, भक्त्यात्मक एवं त्यागात्मक मापदंडों पर ही इन वाणियों की चरितार्थता है।**

पूज्य बाबा की दिव्य-वाणियाँ

पूज्य बाबा के उपदेश और उनकी आज्ञा पर आधारित ही कलनाधाम में वास करने, पूजा करने एवं लोक व्यवहार हेतु मान्यताएँ बनी जो वहाँ की परंपरा है। इनके परिपालन में ही दर्शनार्थी अपनी आराधना, अपनी निष्ठा और समर्पण प्रभु तक पहुँचाते हैं।

"देवस्थान से ढ़िठै न करी" - बराबर ही बाबा अपनी इस वाणी के माध्यम लोगों को सचेत करते रहते थे। ढ़िठै करने का प्रायः भाव यह होता था कि **निर्धारित मान्यताएँ जिनके परिपालन करने में अपने ऊपर उठाये गये कष्ट, सहिष्णुता तप-पूर्ण होता था, तीर्थ-स्थान पर रहकर उनकी अवहेलना करना, जान-बूझकर उनकी अवमानना करना, कल्याणकारक नहीं होता है।**

"देवस्थान से दूरे रही - देवता डरे से प्रसन्न होखऽला" प्रायः इसके प्रति भाव यही होता था कि सामान्य जीवन में अपनी सामाजिक पारिवारिक स्थितियों में हम पूरी स्वतंत्रता रखते हैं। उससे भिन्न देवस्थान पर अधिक संयम, सचेष्टता बरतनी चाहिए। जो सभी व्यवहार, व्यावहारिक जीवन में, हम अन्यत्र निःश्शंक करते हैं, काम-क्रोध, आलस्य, अहंकार जनित उन कर्मों से देवस्थान पर परहेज करना चाहिए। **जो अन्यत्र दोषपूर्ण नहीं है, देवस्थान पर अपराध है।**

यदि इतना संयम, इतना नियंत्रण, **देवस्थान पर रहकर नहीं बरता जा सके तो देवस्थान से डरते हुए दूर ही रहने से प्रायः पूजा स्वीकृत होती है।**

"विनु भय होहिं न प्रीति" - यह तो कलना-धाम की

विशेषताओं एवं विशिष्टताओं में एक विशिष्टता है कि बाबा के द्वारा निर्धारित हिदायतों का भक्ति, आदर, सम्मान, सप्रेम यहाँ के इर्द-गिर्द के प्रत्येक गाँव वासी, हर जाति-वर्ग-तबके के लोग पालन करते हैं एवं धर्ममय जीवन जीते हैं। **सब डर से करते हैं कि ऐसा नहीं करने से बाबा का कोप हो जायेगा।**

बाबा के दर्शनार्थ बहुतों आने वाले ऐसे हैं जो जहाँ से बाबा के दर्शन करने चलते हैं, वहीं से नंगे पैर चलते हैं परंतु आम-जनों के लिए भी परिसर में जूते-चप्पल पहनकर, लेकर जाने की मनाही है और स्वतः सहज भाव से शिव के दरबार का यह नियम पालित होता है।

कलना परिसर स्थित शिवगंगा के मुख्य-घाट सहित इसके किसी भी घाट पर साबुन लगाना, घाट पर बैठकर दातुअन करने से लोग अत्यंत ही डरते हैं।

बाबा जब स-शरीर थे तब भी और आज भी सेवक-गण पोखड़े की रखवाली, घाट की रखवाली लोगों को चिल्ला-चिल्लाकर कहते **"घाट पर दातुअन करना मना है जी", "घाट पर गंदा करना मना है जी", "जूते-चप्पल बाहर ही रखें"**-बस मेले के समय, यात्रियों के बीच इन हिदायतों को चिल्ला-चिल्लाकर कहने में भक्त, सेवक, अपनी सेवा अर्पित करते हैं।

चमड़े का बैग, चमड़े का बेल्ट, चमड़े के किसी सामान के साथ अंदर जाने से परहेज करने में बाबा की प्रसन्नता मानी जाती है। परिसर में चमड़े से बने उपकरणों से एकदम परहेज किया जाता है। **दर्शनार्थी चमड़े के बेल्ट वगैरह खोलकर बाहर ही रख देते।**

आज तक तो पाया ही नहीं गया है कि कलना परिसर में कोई थूका हो। खैनी, तम्बाकू, पान-जर्दा खाकर बाबा की कुटिया में प्रवेश करने का दुःस्साहस तो कोई अभागा ही कर सकता है। अभी भी मंदिर परिसर के बाहर भी लोग बड़ी सावधानी के साथ इन वस्तुओं का उपयोग करते हैं।

परिसर में धुम्रपान यदि किसी ने कर दिया तो तुरंत ही उसे प्राकृतिक दंड पाते मैंने देखा।

यदि बाबा के आदेश से अथवा उनका आदेश लेकर कोई शिवजी पर जलार्पण करते तो सिर्फ पीतल अथवा ताँबे के बर्त्तन में जल भरकर। सामान्य जल-पात्र जिनसे आम कार्य होते हैं उनसे जलार्पण करने की मनाही थी।

जल-फूल से शिवजी की पूजा करने से श्रेयस्कर बाबा कहते थे कि शिव का नाम-भजन, सीताराम नाम लो। जल-फूल से पूजा करने में खतरा है। कैसा जल, कैसा जल-पात्र, आदि-आदि। किसी

भी अवस्था में शिवजी का भजन, नाम-भजन करना दोषरहित होता है। बाबा कहते थे **''खतरा मोल लेवे के कौन काम है''** शिवजी भाव के भूखल हैं।

पैखाना, पेशाब करके आने के बाद बिना स्नान किए परिसर में वास करना निषिद्ध था। आज भी पैखाना करके आने के बाद तो वहाँ वास करने वाले नियमतः, स्वभावतन, निश्चित ही स्नान कर लेते हैं।

धोबी के यहाँ के धुले कपड़े पहनकर, जो कपड़े पहनकर पैखाना-पेशाब किए हों वो कपड़े पहने बाबा की कुटिया में जाना किसी के लिए भी, सामान्यतया, अशुभदायक माना जाता है। जान-बूझकर ऐसा करना आपदामूलक भी माना जा सकता है।

एऽ जग आके फद्दर-फद्दर करऽता

सर्व-दर्शी, सर्व-व्यापी, अंतर्यामी बाबा कलना में आकर वास करने वाले एक-एक की, घड़ी-घड़ी, क्षण-क्षण की जानकारी रखते थे कि कौन कहाँ बैठकर क्या कर रहा है। अनाप-शनाप की बातें वहाँ पर रहकर करते रहना, गैर-सत्संगी चर्चाओं में समय बीताने को बाबा भला नहीं मानते थे। लोग इससे अत्यंत परहेज करते थे।

कलना किसी की जगह नहीं है और सबकी जगह है। कलना में जाकर रहना किसी रेस्ट-हाउस में, धर्मशाला में जाकर रहने से भिन्न होता था, दु:खिया, निराश्रय, सब ओर से निराश का ही वहाँ रहना होता था। बस! बाबा की कृपा-दृष्टि उसे मिल सके इसे ही पाने की तपस्या में दिन-रात रहते सेवक उनसे वापस जाने के आदेश की प्रतीक्षा में रहते थे। इसी में किसी का दिन-दो-दिन, 'एक नवाह रह जा' तो नौ दिन-इसी तरह लोग रहते थे, आते थे, जाते थे। वहाँ रहने के क्रम में 'हनुमान चालीसा पाठ' 'गिरिजा पोथी' सीताराम भजन-माला'' दुर्गा-पाठ बस इन्हीं के पाठ में, भजन में, बाबा की सेवा में, आश्रम की सफाई, परिसर में झाड़ू देना, आश्रम की व्यवस्था में दिन-रात बीत जाते थे। बड़े-बड़े लोग, उद्योग वाले, नौकरी वाले, पढ़ाई-लिखाई वाले-सब एक साथ, एक खाना, एक तरह रहना।

इसमें यह मानसिक स्थिति किसकी थी कि देश-दुनिया को याद करता और अनाप-शनाप की वातों में अपने को लगाता। ऐसे, ऐसी स्थिति में रहना निश्चित रूप से इस बात का बोध कराने, एहसास कराने प्रेरक होता था कि पूर्व की गल्तियाँ हैं, अपराध हैं, चूक हैं, कि ऐसा भोग है। मुझे भोगना पड़ रहा है। सुयोग

है, पूर्व-जन्म का फिर कोई पुण्य-फल है कि इसे भोगने के लिए, निदान-त्राण के लिए आश्वस्त करने वाला पूज्य बाबा का सहज एवं कृपाशील सान्निध्य मिल रहा है। दूसरों की निन्दा, दूसरों की भावना का निरादर, उनके हित-सम्मान के साथ खिलवाड़, सनातन मूल्यों की मान्यताओं के प्रति अपराध, अपनी मानवीय नीचताएँ आदि की आत्म-समीक्षा का यह सुयोग देता था। दानवीय-दैवीय, उद्र्ध्व-मुख एवं पतोन्मुख करनेवाली अपनी प्रवृत्तियों की पहचान करने के विवेक का प्रकाश इन नौ दिनों, अठ्ठारह दिनों, महीना दिनों के ''कलनावास'' में प्राप्त होता था।

एक बड़ा ही माकूल जँचता है श्री राम नरेश ठाकुर जी के साथ अपने आप बीती बात का चित्रंण प्रस्तुत करना। परमहंस-प्रभा के माध्यम उनका यह संस्मरण पढ़ने को मिला एवं संग-साक्षात्कार में भी मुक्त-कंठ भाई रामनरेश जी ने कई बार सुनाया।

रामनरेश जी कलना जाने-आने लगे थे। ऋण-कर्ज के बोझ के तले भाई रामनरेश जी विचित्र रूप से दबे थे और लड़की की शादी नहीं हो पा रही थी। कलना आते-जाते थे। उन्हें कुछ दिन कलना में वास करने का आदेश मिल गया। मैंने जैसा गौर किया

उपदेश मूलक, रहस्यमूलक कोई बात सीधा संबंध किसी अन्य से रख रह है परंतु बाबा सामान्य रूप से और और अन्य लोगों को सुनाते थे। इसमें वह बात जिससे सीधा मतलब रखती थी उसके तो सीधे अन्तःस्थल में जा औषधि रूप बाबा की वह वाणी अपनी क्रिया शुरू कर देती थी। इसी क्रम में एक दिन सेवकों के बीच बात करते बाबा ने कहा **''जे ब्राह्मण आ गाइ के कलपावी ओकर पाप के गाँठ पड़ जाता। ओ जल्दी ना नू छूटी''**। बस, सब सुन रहे थे कि राम नरेश जी एकाएक रोते हुए बाबा के दोनों चरण पकड़ लिए और कहा ''बाबा एक दिन क्रोध में मैं चप्पल से गाइ मैया को मार बैठा और एक दिन एक ब्राह्मण की बड़ी बेइज्जती की।'' ब्राह्मण उनके साथ व्यवहार में कहीं त्रुटि कर बैठे थे और उनसे कमजोर थे। ''इतना कहकर वे फूट-फूटकर रोने लगे। बाबा ने सुना। चर्चा फिर और बातों पर मुर गई होगी। कुछ दिनों के बाद रामनरेशजी के स्वतः सुलभ रूप से सभी कर्ज छुट गये एवं जिस परिवार ने अस्वीकृत कर दिया था, उस परिवार के लड़के वाले, परिवार वाले स्वयं प्रस्ताव लेकर आये कि हमलोग आपकी लड़की से अपने लड़के की शादी करवायेंगे। ऋण-कर्ज से भी मुक्त हो गये, लड़की की शादी भी हो गई। और **'उधरहिं विमल विलोचन ही के'** दृष्टि खुल गई, ज्ञान भी मिल गया।

वाणी में संयम कि आपसे किसी को चोट नहीं पहुँचे। आप धरणार्थी हैं। विनम्रता के साथ धनी गरीब के साथ, सबल-कमजोर के साथ, पढ़े-लिखे अपढ़ के साथ रहें। एक भक्ति और समर्पण के नाते सब उस प्रभु के चरण में दीन, दुःखिया सदृश रहते। **यदि आप धनी रहते, सबल रहते, सक्षम-समर्थ रहते तो शरण की क्या जरूरत थी। महादेव के दरबार में तो सिर्फ अहं का शमण था और ''दासोहं'' भाव का विकास था।**

फिर भी स्वभावादि तो जन्म-जन्मादि के क्रम में बने हमारे संस्कार-कुसंस्कार से प्रेरित हैं। अपनी मानवीयता की स्थिति में कोई साधना के बल पर एकाएक एवं समूल सुधार-परिवर्त्तन की कहाँ तक आशा अपने बल पर कर सकता था। इसलिए व्यवहार जन्य, वाणी जन्य, कर्म-जन्य हो रहे एवं हुए किसी त्रुटि, दोष के निवारणार्थ क्षमा-याचना माँगते सेवक-गति में समर्पित प्रभु श्री परमहंस जी बाबा के दरबार में लोग वास करते थे एवं प्राप्त उपदेश की पगडंडी पर अपने उन्नयन में लगे रहते थे।

एक घड़ी, एक दिन की भी इस तरह की हाजिरी उन्नयन, उद्धार के अनंत मार्ग हेतु संबल, पाथेयदायक होती थी।

इसी समझ और विश्वास के साथ 'तब के कलना' में वास

होता था और अन्यथा करते रहने वाले के प्रति बाबा का सामान्य आक्षेप होता था कि ''एऽ जऽग आके फद्दर-फद्दर करऽता।''

ई कैलाश बाऽ। एऽ जग बैठलो वाम न जाइ

चूँकि स्वयं बाबा की यह वाणी है जिसे लोगों को वे यदा-कदा सुनाते थे, हमें इसकी सत्यता और शास्वतता पर संदेह करने की जगह विश्वास करना होगा। कलना में पूज्य बाबा के प्रसन्नार्थ निर्धारित सीमाओं में समय के उपयोग हेतु दर्शायी गई दैनिक चर्चाओं में रहते भजन के माध्यम अपने त्राणार्थ, कल्याणार्थ अपनी व्यथा, पीड़ा की अर्जी बाबा से जो भी करेगा उसका निश्चित कल्याण होगा, हुआ और आज भी होता है। कैसे दरबार में किसे, किस बात की, किस कारण से, छूट मिलती थी, मिल रही है वो सब वही जानें। जो जहीं जिस बात के लिए हारता है और हारा हुआ किसी विधि, विधान, योग, ध्यान, शुचि, संयम, सेवा आदि के किसी योग्य अपने को नहीं पाता है-''गतिस्त्वं गतिस्त्वं'' भाव में समर्पित रहता होगा, उसका मूल्यांकन करनेवाले प्रभु स्वयं अपने हैं। जो शरीर से निर्बल हैं, ठंढ बर्दाश्त करने के लायक एकदम नहीं हैं, उनके लिए विधान उनके अनुरूप बाबा ने दी। किसी को कोई पाठ दिया तो किसी को कोई दूसरा पाठ। किसी को एग्यारह

आवृति तो किसी को एक आवृति भर। किसी को झाड़ू लगाने का काम तो किसीको बैठे बैठे सीताराम रटने का काम। किसी को हनुमान चालीसा तो किसी को दुर्गापाठ।

गरीबनाथ के इस दरबार में प्रत्येक रोगी की अपनी-अपनी, स्वतंत्र पहिचान थी किसका क्या रोग था, कैसी-कैसी व्याधियाँ किसमें कितनी प्रमुख थी वे ही वैद्य जानते थे। सैकड़ों औषधियों के बीच मर्ज और रोगी की अवस्था के अनुकूल औषधि और खुराक का निर्धारण था जो व्यक्ति-व्यक्ति अपने-आप जानता था और उसके बाबा जानते थे और आज भी जानते हैं। कोई किसी से अपने को अधिक पवित्र, अधिक योग्य पात्र समझने लगे इसमें वह गलती कर सकता है। प्रभु के दरबार में ''को बड़ छोट कहत अपराधू''। किसी पर कोई टिप्पणी नहीं। मुझे ऐसा लगा और लगता है जैसे जितने ही जीव हैं उतने ही बाबा के साथ उनके स्वीच हैं। बाबा के उस बोर्ड में सबका अपना स्वतंत्र कनेक्शन है। कोई किसी के साथ टकराये नहीं, किसी को पढ़ावे नहीं, सुधारने का जिम्मा नहीं ले, देखकर हँसे नहीं, टिप्पणी नहीं करे। अपने में झाके, अपनी कमजोरियों को परखे, अपनी सीमा का ज्ञान हो। इतना ही ध्यान में रखे कि कोई स्वयं रोगी है, अल्पज्ञ, अज्ञानी है, मूढ़ है, निरावलंब है, दरबार में अपनी टेक

लगाए हुए है। **हरि के हजार नाम हैं, अपने अनंत हैं तो उनके मार्ग भी अनंत हैं।**

एक संस्मरण अपने संबंध की प्रसंगवश याद आ जाती है। शाम का समय था बाबा की कुटिया में प्राय: मैं अकेले था। बाबा का पाठ करने के बाद उन्हें अपनी स्वयं की अर्जी सुना रहा था। बीच में एक वृद्ध महिला आ पहुँची। मैंने फिर अपना पाठ शुरू कर दिया और फिर कुछ देर बाद बाबा से अपनी वही व्यथा सुनाने लगा। बाबा चद्दर से संपूर्ण शरीर माथे तक ढके सोये हुए से थे। मुझे आभास था कि बाबा सोये नहीं हैं, इसलिए मैं सुना रहा था। उस बूढ़ी माता ने समझा कि बाबा सोये हुए हैं और उन्होंने मुझे अपना मंत्र सीखाना शुरू करते कहना शुरू किया ''यौ बौआ। ई बाबा के की सुनवै छिऐन्ह। अहाँ के हम जे कहै छी से करू'' बस बाबा ने एकाएक चादर माथे से हटाकर एक भिन्न नजर से देखते डाँटते हुए उस बूढ़ी से कहा ''गे, ई हमरा लग आवऽ ता कि तोरा लग? एकरा तोरा पढ़ावे के कोन काम है? हम त अपने एकरा ....''। बस, उस बूढ़ी माता का होश खतम। उसने बाबा से क्षमा माँगी। अपनी कुछ बातों के लिए वो कुख्यात थीं। लोग उनसे दूर रहते थे, डरते थे।

बस बाबा की एक यह उक्ति कि ''ई हमरा लग आवऽ ताऽ

कि तोरा लग'' **सबके पढ़ने के लिए,** गुनते रहने के लिए एक **सीखदायक-पाठ, यह संस्मरण** माना जा सकता है। वहाँ कोई **किसी का गुरू नहीं बने, जो बाबा के हैं बाबा स्वयं उनकी अंदर की आवाज के माध्यम उन्हें पढ़ाते रहते हैं।**

मैं कमजोर स्वास्थ्य का था। कलना की बड़ी कठोर स्वरूप की चर्या थी। सूर्योदय से पहले, नित्य क्रिया से निवृत हो, स्नान कर, भजन-पाठ सेवा-कार्य की ओर आमुख हो जाना था। जब भी शौचादि हेतु वाह्य-भूमि जाओ स्नान करो। समय-समय पर मेरा साहस टूटने लगता था कि कैसे इस चर्या में नियमित रह सकूँ। मैंने एक दिन बाबा से निवेदन कर दिया कि बाबा स्नान करना, शिव गंगा में डूबकी मारकर नहाना बार-बार मुझे नहीं संभव बनता है। ''तो ठंढ़ा न बर्दास्त होई, कोन काम ह माथे से नहाये के''। इस तरह मुझे तो छूट मिल ही गई। बाद में देखता गया कि और-और बहुत थे जो सिर्फ डाँड़ से नीचा ही स्नान कर वस्त्र बदले परिसर में रहते थे। बिना इस तरह स्नान किये रहने के लिए किसी का अपना मन ही नहीं इजाजत देता। फिर बहुत पहले सुबह में जाड़े के डर से स्नान से भागने पर बाबा ने मुझे ही कहा था ''ई जाड़ा न हऽ। ई आलस, आसकत हऽ अर्थात् सुख की इच्छा, भोग की इच्छा, आलस्य-ग्रंथि से आसक्ति''।

इस तरह जो कलना में बाबा की वाणियों से आचरणार्थ प्राप्त उपदेश-पुंज के प्रकाश में वहाँ बैठकर हरे, थाके, निर्बल, निःस्सहाय अपने को समझते ''न बुद्धिर्र न विद्या न वृत्तिर्ममैव गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानी'' भाव से ''जाऊँ कहाँ तजि शरण तिहारे'' प्रभु के नाम लेता घड़ी-दो-घड़ी भी कोई कलना-परिसर में बितायेगा, उसका वह निरर्थक नहीं जायेगा। जैसे हर जगह वैसे कलना में भी, जैसा कल वैसा आज और सब दिन के लिए। बाबा की यह वाणी अवदान है।

ए जग से खाली हाथ वापस कोई न गेल

भाव अपने-अपने हैं, समझ अपनी-अपनी है जिसके आधार पर कोई भी किन्हीं की भी उक्ति, उनकी वाणी का विश्लेषण करेगा। भावात्मक, भक्त्यात्मक भाव के सकारात्मक दृष्टि के सहारे ही इन संत-वाणियों में, इनमें निहित रहस्यों का हम अपने उन्नयणार्थ मात्र अन्वेषण कर सकते हैं।

''कल्याणेश्वरनाथ से खाली हाथ वापस आज तक कोई न गेल हऽ।'' यह कहते मैंने भी कई बार स्वयं परमहंस बाबा से सुना, यद्यपि खाली हाथ अस्वीकृत आये कुछ जने मेरे सामने भी हैं, मुझे भी सुने हैं।

दरभंगा के महाराजाधिराज सर कामेश्वर सिंह परमहंस बाबा के दरबार पहुँचे थे। 1952 का चुनाव लड़ रहे थे। स्व० श्री श्यामनंदन मिश्र उनके प्रतिद्वन्दी थे जिन्हें काँग्रेस की टिकट मिली थी। लेकिन महाराजाधिराज के कलना जाने से एक दिन पहले ही श्री मिश्र कलना हाजिरी दे चुके थे। बाबा नें महाराज से कहवा दिया कि ''श्यामनंदन तऽ ए काम के लेल पहिले आ गेल। कहऽ दे जे और जे माँगे के होय से माँगो''। मिथिलेश वापस अपने राज-स्थल चले आये। फिर सुना जाता है बाबा नें बाद में कहा ''सपन भेल जे दरभंगा महराज बेटा माँगी त 'बेटा मिली। ऊ मँगवे ना कैलक'

फिर कितने के प्रसंग में सुना गया है बाबा ने कहा ''एकरा कप्पाड़े में ना बा तऽ हम की करू'' कप्पाड़ में न रही त ए जग कपाड़े फोड़ ले ला से की होइ। बराबर बाबा कहते थे ''हटवरिया के जूगेऽ। मंगलक एऽगो बेटा दे देली दू गो''। कलनावासोपट्टी के नजदीक ही भैयापट्टी हटवरिया के स्व० युगेश्वर झा थे। अपनी सज्जनता एवं अपनी सम्पन्नता के कारण इलाके में अत्यंत लोकप्रिय एवं मान्य व्यक्ति थे। उनकी दो लड़कियाँ मात्र थीं। परंतु पुत्र एक भी नहीं था। आतुर-आर्त्त थे। बगल के ही स्व० वेदबाबू परजुआर ग्राम के बाबा के उस समय के अग्रणी सेवकों में थे। उन्होंनें ही जुगेश्वर बाबू

को ढाँढ़स दिलाया और कहा कि आप चलें, बाबा परमहंसजी के यहाँ अपना दुखड़ा रोएँ। बाबा कृपा कर देंगे तो आपको निश्चित पुत्र होगा। श्री युगेश्वर झा जी आकर बाबा के चरणों में गिड़ गए और कामना-पूर्ति की भीख माँगी। बाबा ने प्रायः उस समय चल रहे पोखड़े के कार्य में कुछ देने हेतु कबुला कर देने कहा। बाबा ने सुन लिया। एक ही वर्ष के बाद उन्हें एक पुत्र-रत्न प्राप्त हुआ और फिर दूसरा भी।

बराबर बाबा युगेश्वर झा का उल्लेख ऐसे-ऐसे संदर्भों में कर देते थे ''हटवरिया के जूगे-माँगलक ए गो, दे देली दू गो''। आज उनके दोनों पुत्र सपरिवार, नत्-मस्तक कलना की हाजिरी देते सर्वस्वार्पण कलना के प्रति सेवा-रत् रहते हैं।

इस तरह बाबा की कृपा से कितने को क्या मिला-इसका लेखा-जोखा करना तो असंभव है परंतु ''कपार में ना रही त ए जग माथ फोड़ला से की होई'' एवं पुनः ''कलानेश्वरनाथ से खाली हाथ वापस आज तक कोई न गेल'' इन दोनों विरोधाभासी वाणियों के बीच ईश्वरीय रहस्य का ताल-मेल तो ऊँची अंतर्दृष्टि से ही जाना जा सकता है।

वास्तव में कलना से खाली हाथ वापस कोई ना गया होगा।

घूमते-टहलते कहीं से कोई आये दर्शन किए उन्हें भी दर्शन तो हुए। जो ढूँढ़ रहा था, हर जगह से हारा थका था, ''श्रवण सुयश सुनि'' निरावलंब आया था, उसे जरूर मिला, उसने पाया, उसे विश्राम-स्थल मिल गया। भोग और भाग्य के विधान से उसे वो सब कुछ मिला, मिलता रहा, मिल रहा है जो किसी को भी चाहिए। एक दिन एक सेवक बाबा से गुहार लगाते कह रहे थे ''बाबा गरीबी नैं हँटलौं सरकार''। बाबा, ने कहा ''ऊँह। दरिद्रा नँ नू है, संतोष दे देली, आब की चाही''। उसनें नतमस्तक बाबा के चरणों पर मस्तक रख दिया। बाबा कहते थे ''जब आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान''। पूज्य बाबा में सर्वशक्तिमान की सारी विभूतियों का पूर्ण एहसास हो जाने पर भी यदि किसी की सभी कामनाएँ पूरी नहीं होती थी तो उसे स्वतः एक दार्शनिकी सान्त्वना मिलती थी जो सन्त के चरण से अविरल झरता महा-प्रसाद है। 'मिले ना मिले, संग ना छूटे' बस यही कामना। फिर दर्शन हो, दर्शन देते रहें, हाजिरी लेते रहें। दुनियाँ के खेल के बीच यह अवलंब साधारण नहीं होता है।

कोई भी कलना आए, कामनार्थी ही आए। पुत्र के लिए, धन के लिए, नौकरी के लिए, प्रोमोशन के लिए, परीक्षा में

सफलता के लिए, कलह-विग्रह की शांति के लिए-इसके लिए, उसके लिए। इच्छा का अंत नहीं, पात्रता की सीमा है। जो जिस लायक, जिसके लिए जो पथ्य, जो कल्याणकर, उसे वही मिला, मिला जरूर, मिलना जरूर है, नहीं तो इतना बड़ा संसार बाबा का आज कैसे विस्तार का आकार पा सका होता जिसकी न कोई गणणा संभव है, न उसका माप है और न कोई सीमा।

पूज्य बाबा के श्रीमुख से अपने फलाहार के संबंध में हिदायती उनकी वाणियाँ मैं सुन चुका था।

पूज्य बाबा ने मेरे घर आने की एकाएक अहैतुकी कृपा कर दी। अपने आप बोले कि ''हमरा नारायणपट्टी जाय के होई। नारायणपट्टी जाएव''। मैं तो चौंक गया, आनंद और आश्चर्य के कैसे-कैसे तरंग मेरे अंदर में ऊहापोह उत्पन्न करने लगे, कैसे वर्णण किया जा सकता है। बाबा ने अपने जाने की तिथि भी निर्धारित कर दी। मैं वापस घर चला आया।

घर पर अपने परिसर की सफाई, जैसे जो संभव हुआ, करवाई। निश्चित था बाबा के साथ कुछ पंडित पंडे आते ही। उनलोगों के फलाहार अल्पाहार का जो संभव प्रबंध हो सका, पूरी निष्ठा एवं जो ज्ञान था विधि-विधान के साथ किया। परंतु बाबा के

स्वयं के फलाहार के लिए मैं किसी भी तरह की व्यवस्था करने का साहस नहीं कर सका। स्वयं मैं उस दिन पूज्यश्री को लाने चला गया रहता-फिर कैसा प्रबंध हो पाता, नहीं हो पाता,. मैंने बाबा के फलाहार की कोई भी व्यवस्था नहीं की। सिर्फ इतना किया कि एक नई छोटी बाल्टीन बाजार से ले आया एवं सोचा कुएँ से पवित्र जल लेकर बस तुलसी पत्ते भर बाबा के नैवेद्य-भोग हेतु अर्पित करूँगा। तथापि इतना किया था कि एक ग्रामीण ही काँवरियों के दल के सरदार बम थे, मेरे सहयोगी थे मेरे गाँव के ही श्री रामचरित्र राय। पूज्य बाबा को लाने कलना जाने के समय उन्हें आम के पेड़ से दो-चार आम तुर कर उजले नये वस्त्र में लिपट कर पूरे कामरिया भाव में रक्खे रहने मैं कह गया था।

मैं कलना का नया छात्र था। एकदम प्राथमिक और प्रारंभिक अवस्था थी मेरी, यद्यपि देवता से डरने, देव-स्थान से डरे रहते पूजा-अर्चना करते रहने, ढिठै नहीं करने का यथायोग्य सबक, अनुभव मुझे मिल चुका था। मुझे सुनने का मौका मिल चुका था कि **''हमरा खाये के रहैत त हम अपन देश छोड़ के ई देश की करे ऐती। साधु के साथे जिद्द न नू करे के, ढिठै ननू करे के। जे जान-बूझ के हमरा फलाहार करावे में ढिठै कयलक से निर्वंश हो गेल। कोन काम है, हमरा फलाहार के लेल जिद्द करे के''।**

मैं तो मान रहा था कि बाबा के नाम उनके प्रिय भजन, प्रिय पाठ, समर्पित कर दो, बाबा का भोजन हो गया। बाबा के नाम नाम-भजन ही उनका भोजन है।

बाबा को जब मेरे यहाँ तुलसी-पत्ते एक बर्त्तन में सामने अर्पित कर दिया, उन्होंने तुलसी-पत्ते को प्रसाद बना दिया, अपने पान करने के बाद लोगों के बीच प्रसाद बाँट दिए।

फिर वो आम भी बाबा बड़े प्रसन्न-चित्त से खाए। उसे भी लोगों के बीच बाँट दिया। मैंने यह कहते आम सामने रक्खा था कि बाबा जैसे संभव हुआ, ये आम तोड़े गए। अब जैसा हो, इसे अपने हाथों प्रसाद बना देने की कृपा की जाय।

> ''सुंदर आसन बोरा षट् कर वसन पड़े,
> तिल तेल भू चंदन गोपी लेप करे''

कलना वास अथवा पूज्य बाबा के सानिध्य में रहने के क्रम में अथवा बाबा के सम्मुख जाने तक के हेतु आवश्यक, अपेक्षित शुचिता का एक बड़ा ही महत्वपूर्ण पहलू था— जूठे का ख्याल करना।

हाथ से जीभ छूआ, तो बिना हाथ धोये, थूका तो बिना कुल्ला किए, बिना मुँह धोये रहना भी वर्जित माना जाता था।

बाबा के स्वयं की चर्या के संबंध की चर्चा तो किसी भी सुननेवाले के लिए आश्चर्य की बात, अविश्वसनीय ही लगेगी परंतु सदा सर्वदा हमलोगों ने इसे अक्षुण्ण रूप से पालित होते देखा। **इसीलिए तो बाबा अनुकरण नहीं आराधना के केन्द्र बन गये।**

बाबा जब बाह्यभूमि जाते थे तो पोखड़े से लेकर बाह्यभूमि तक सेवक बाल्टीन में जल लिए खड़े रहते थे। जहाँ भी रास्ते में कौए तक के चट्ट रहते थे आगे-आगे सेवक उस पर पानी उलेड़ते पैड़ से धोते चलते थे। **यदि कहीं पक्षी के चट्ट** रह भी जाते **और सेवक की नजर से छूट जाते तो बाबा के पैड़ स्वतः उसके बगल होकर निकल जाते।** बाह्यभूमि से वापस पोखड़े तक में दो-तीन जगह बैठकर बाबा मिट्टी-पानी से पूरे कटी से नीचे प्रच्छालन करते और तब स्नान करते फिर पोखड़े के घाट से कुटिया के द्वार तक आते पुनः उनके चरणों का सेवक पानी से प्रच्छालन करते तभी बाबा कुटिया के अन्दर प्रवेश करते।

बाबा के टुकड़े स्नान के बाद खीचे जाने पर धूप में दो सेवकों द्वारा टुकड़े के दोनों किनारे की छोड़ को पकड़कर सुखाया जाता था। कड़ी निगरानी कि कहीं उड़ती पक्षियाँ टुकड़े पर चटक न कर दें।

बाबा बोड़ा पर सोते थे। मात्र एक टुकड़ा दस़-हाथ का पहनने को रहता। लोगों ने भेंडी के कंबल चढ़ौना शुरू किया। उजला सूती चादर चढ़ौना चढ़ाना शुरू किया। जिन्होंने पूज्य श्री को देखा, उनके साथ रहे वे धोखा से भी नहीं बोल सकते, याद कर सकते कि कभी किसी ने बाबा के कपड़े में साबुन, सोडा लगते देखा। कभी-कभी मिट्टी के ऊस से उनका कपड़ा साफ होता था। चढ़ौना के जो कपड़े आते उनमें कहीं लाल का चिह्न भी न हो। सात-आठ बार उसे जोर के हाथों से फींचा जाता था और तब उनके अपनी निर्धारित विधि से उसे सुखाया जाता था।

कभी सिलाये हुए किसी वस्त्र के धारण करने का कभी प्रश्न भी नहीं उठा। बाबा तिल का तेल लगाते थे, कलना की मिट्टी लगाते थे। कभी-कभी गोपी चंदन का भी लेप शरीर में लगाते। हमेशा ''राम-राम'' ''गिरिजा-गिरिजा'' शिव-शिव जपन करते रहते।

जल-फूल से पूजा करने से अधिक अपने आश्रितों को बाबा नाम-भजन, नाम-पाठ, नाम-रटन का आश्रय-आधार पकड़ाते **''जल-फूल से पूजा में खतरा हऽ नाम में कोई खतरा न हऽ। जब मोन होय, जहाँ मोन होय। ओही से देवता प्रसन्न होइ।''** बाबा कहते थे।

यदि किसी ने रूपये बाबा की सेवा में हाजिर किया तो बाबा ने स्वयं उसे छूया नहीं। यदि कभी हाथ से छूया तो पुन: रूपये किसी को देकर या सुपुर्द कर हाथ धो लिए।

यही थी कलनाबाबा की शुचिता की, उनकी अपनी निजी चर्या जिसका मात्र एक विहंगम चित्रण प्रस्तुत किया जा सका है। तत्कालीन सेवकों को, पूज्य बाबा के कृपा-सानिध्य में रहे लोगों को स्मृत करने ऐसी चर्चा उनके लिए अत्यंत ही रोमांचकारी है। इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है।

बाबा कल्याणेश्वरनाथ के दर्शनार्थ, उनकी हाजिरी देने सैंकड़ो ऐसे लोग आते थे जो सीधे बाबा परमहंसजी की कुटिया में जाते। बाबा की हाजिरी देते। उनके उपदेशानुकूल उन्हें पाठ-भजन सुनाते। जाने की आज्ञा माँगते। **आज्ञा मिलने पर कल्याणेश्वरनाथ महादेव के मंदिर के त्रिशूल का नमन करते सीधे चले जाते। पूरा उनका मन संतुष्ट होते जाता था कि उन्होंने कल्याणेश्वरनाथ की हाजिरी दे दी, दर्शन कर लिए।**

ऐसे-ऐसे लोगों को कभी-कभी आदेश होता था जलार्पण करने। जलार्पण शिवजी के मंदिर जाकर शिवजी के लिंग पर अथवा पीपल के पेड़ की जड़ में अथवा तुलसी में।

परंतु जल चढ़ाने के लिए बाबा का आदेश होता था जाकर देख आने के लिए कि पोखड़े के जल की सतह पर ज्यादे हिलकोड़े तो नहीं हैं, जल स्वच्छ, स्थिर है कि नहीं।

कभी-कभी काँवरिया भी जल लेकर बाबा दरबार में आते थे। एक भार जल कल्याणेश्वर महादेव के लिए लेकर और एक भार जल बाबा परमहंसजी के लिए लेकर आते थे। देखा जाता था कि कभी-कभी बाबा कल्याणेश्वरनाथ महादेव बाबा वाला जल बाबा परमहंसजी स्वयं पी जाते एवं दूसरे भार का जल कल्याणेश्वरनाथ को अर्पित कर देने कहते अथवा कलना शिव-गंगा में प्रवाहित कर देने कहते। वर्त्तमान में अग्रणी सेवकों में हमलोगों के बीच स्तंभ-सदृश भाई पं० श्री रविन्द्र झा जी ग्राम परजुआइर मधुवनी का ऐसा अपना निजी अनुभव है।

यही था कलना बाबा श्री परमहंसजी का दरबार। ''राजा रंक करे सब सेवा, भक्ति करे सो पावे मेवा''।

***

फलाहार

मैंने स्वयं बाबा को अपने श्रीमुख से ऐसा कहते कई बार सुना था ''हमरा खाय से कोन काम हऽ? खाय के रहैत तऽ हम छपरा छोड़ के मिथिले में आके रहती। लोग फलाहार करेला दिक्क करऽला। हमरा फलाहार करावे में जे ढिठें कैलक ऊ निर्वंश हो गेल। कोन काम है ई ढिठै करे के''।

मैं आते-जाते, समय-समय पर रहते, वाणियों का श्रवण करते, निरीक्षण करते ऐसा अनुभव कर चुका था कि बाबा को सिर्फ भजन का भोजन चाहिए। कोई बाबा को तृप्त करना चाहता है खूब उनके नाम सीताराम-सीताराम, जय गिरिजा महारानी-2 हनुमान चालीसा भजन पाठ कर दे-बाबा तृप्त। उनका फलाहार डर-भाव से, प्रेम-भाव से, उनके भाव के अनुसार उनके द्वारा मान्य विधि से पकाकर, सिद्ध कर हाजिर करे तो ठीक। उसमें भी तो प्रसाद वे बाँट ही देते थे हाथों-हाथ, सबको बुला-बुलाकर।

फलाहार संबंधी एक दो अपने सामने की घटनाएँ प्रस्तुत कर रहा हूँ। नजदीक के ही एक गाँव कसेरा से एक मास्टर साहब की

पत्नी को बाबा एक-दो दिन आदेश कर चुके थे कि "कद्दू के फलाहार बना के भेज दीहे।" जब दाँत थे बाबा के तो वे सिर्फ कच्चे फल, कच्चे ओल, कद्दू, इमली, चिनियाँ बादाम आदि-आदि ही बाबा फलाहार करते थे। दाँत के कमजोर पड़ जाने पर अथवा नहीं रह जाने पर उनके लिए फलाहार सिद्ध कर आदेशानुसार व्यवस्था करने का मौका लोगों के सामने अब प्रशस्त होने लगा लेकिन नंगे पैड़, स्नान-धोकर, कोई फल उतारे, तोड़े, फिर लकड़ी के जलावन पर, शुद्ध उजला वस्त्र पहनकर जिस पात्र में किसी ने कोई कभी-भी खाना नहीं खाया हो, पानी नहीं पीया हो–ऐसे पात्र में उनके लिए फलाहार रखना या फिर लाना। नहीं तो मंजूर ही नहीं होता। मार्ग में कहीं फलाहार को रख दिया तो फलाहार अशुद्ध। इस तरह बड़ा कठिन, तप-साध्य था, जोखिम भरा था बाबा के लिए फलाहार बनाने का भार लेना। खाद का उपयोग नहीं हुआ हो। बड़ी विचित्र और कठिन बात थी। बिना खाद के बाबा के नाम, आलू आदि की खेती लोग, बाबा के निमित्त करते थे।

तथापि ऐसे परिवार वाले थे जो सारी व्यवस्था इस तरह की अलग से समर्पित अपनी पारिवारिक व्यवस्था में रखते थे कि चूल्हा, बर्त्तन सब अलग बाबा के फलाहार-पकाने हेतु उनके यहाँ रहते थे। बर्त्तन लाल नहीं हो, वस्त्र लाल न हो-सारी हिदायतें थीं।

ऐसे ही परिवारों में वह मास्टर साहब का भी परिवार था जिनकी पत्नी को बाबा ने कद्दू का फलाहार बना लाने का आदेश दिया था। मास्टर साहब की पत्नी ने अपने एम० ए० पास एक लड़के के हाथ पीतल के बर्त्तन में विधिपूर्वक घर से कलना फलाहार भेजवाया। वर्षा शुरू हो गई थी। घोर घटाटोप बादलों से आकाश आच्छन्न था। बाबा कुटिया में तो दो बजे दिन में ही हल्का-हल्का अंधेरा लग रहा था। मैं भी कुटिया में बैठा था। और लोग थे। बाबा को सूचना दी गई। फलाहार लेकर अंदर आने का बाबा का आदेश हुआ। बहुत देर बाद, याद दिलाने पर, बाबा ने बर्त्तन अपने हाथ में ले लिए, पत्ते हटा दिए गए और बाबा ने फलाहार सबको बाँटना शुरू कर दिया। छः सात के लगभग लोग थे। थोड़ा-थोड़ा सबों को देते जा रहे थे, फलाहार का पात्र खाली पड़ता जा रहा था, फलाहार हाजिर करने वाले छात्र की आंतरिक विह्वलता बढ़ती जा रही थी कि फलाहार अब बचा कहाँ कि बाबा स्वयं पान करेंगे। बाबा को हाजिर किया गया फलाहार यदि बाबा स्वयं खा लेते थे तो किसी के भी विश्वास-बल और प्रसन्नता बढ़ जाने की सीमा नहीं रहती। स्वाभाविक। सब तो कामनार्थी ही रहते थे।

मैं भी गौर कर रहा था, बर्त्तन खाली होता जा रहा था और

लोगों को बाँटते जाते बीच-बीच में बर्त्तन की तलहटी को बाबा ऊँगली से रगड़ते थे। जब उस छात्र ने बहुत अर्जी की तो बाबा ने कहा 'हो त गेल। सबके बाँट देली नू' एक तरफ से फिर वह छात्र अनुनय-विनय करने लगा कि जरा सा भी बाबा स्वयं अपने फलाहार पान कर लें तो दूसरी तरफ बाबा ऊँगली से बर्त्तन की तलहटी रगड़ते दूसरों को दिखलाने लगे कि देखो यह क्या है। लोग नहीं गौर कर पा रहे थे कि बाबा ने बर्त्तन को एकाएक पलट दिया और दिखाया तो लोगों ने पाया कि बर्त्तन की पेंदी को रेसा गया था। **फूटे बर्त्तन में बाबा का फलाहार लाना, या बनाना या फिर फूटे बर्त्तन शिवजी के जलार्पण के काम में लाना बाबा के क्षेत्राधीन में वर्जित था।** स्वयं वह छात्र महसूस कर गया। हम नये लोग क्षुब्ध थे कि कैसे बाबा बर्त्तन की पेंदी में रही इस स्थिति को स्वयं पकड़ लिये। सिर्फ यह दिखाना था प्रायः कि **पात्रता की कितनी प्रमुखता थी, पात्र कैसा होना चाहिए जो मंदिर के महादेव तो बोलकर नहीं कहते हैं, लोगों के ''बोलता महादेव'' ने बोल-बोलकर दिखा-दिखा कर लोगों को ज्ञान दिया, परहेज करना सिखाया। फिर क्या, क्यों वो क्या करते थे इसे कौन समझ सकता था।**

फलाहार संबंधी ही एक और घटना मेरे सामने की ही है जिसे प्रस्तुत करना बड़ा उपयुक्त जँचता है। लाल बर्त्तन या लाल रंग से युक्त कपड़े आदि की छू तक बाबा के फलाहार के लिए वर्जित थी।

एक व्यक्ति (नजदीक के ही दो-चार की०) के किसी सज्जन ने मूज-सीकी के बर्त्तन में केले के पत्ते तले में बिछाकर फिर केले के पत्ते से ही ढ़ककर दूध के बना खोआ लेकर पहुँचे। वे लोग जानकार लोग थे। विधि-विधान से बनाकर लाये ही होंगे। परंतु मूज के बर्त्तन की सीकियाँ कहीं-कहीं लाल से रंगी थी। भक्त सज्जन ने बाबा को ज्योंही हाजिर करना चाहा कि एक सज्जन नें लाल सींकी युक्त उस बर्त्तन को देख बाबा को कहना चाहा और कहा कि बाबा बर्त्तन लाल रंग के सीकी से बना है। बाबा तुरंत अपने हाथ उस भक्त के बढ़े हुए हाथ से फलाहार स्वीकार करते कह दिया ''लावऽ लावऽ कुछो न है। भाव है। एकरा में भाव है'' और सबके भौंचक रहने की बात थी कि बाबा नें फलाहार स्वयं पान करते उसे प्रसाद बनाते लोगों के बीच बाँट दिया। कहीं भी लाल रंग आदि का विचार इसमें दिवाल नहीं बना।

बस, एक ही संदेश देना था प्रभु को

''रामहिं केवल प्रेम पिआरा, जानि लेहु जो जाननिहारा''

कोई नियम, कोई परहेज, किसी बंधन का कोई लेखा-जोखा नहीं यदि प्रेम, डर, भय युक्त भाव-सहित समर्पण किसी प्राणी का है।

***

हम की करू ?
गिरिजा माई ना माफ केलक

भक्त और भगवान के बीच के अंतर, भक्त और भगवान के बीच के संबंध को जानना हमसे संभव नहीं है। बाबा के भक्तों ने तो संपूर्ण ईश्वरीय सत्ता के दर्शन उन्हीं की कृपा में किए। भक्तों के लिए यह अबोध्य था कि कि कौन वैद्यनाथ हैं, कौन कल्याणेश्वरनाथ हैं, क्या रामजी हैं, कहाँ गिरिजामहरानी का वास है। भक्त तो "जय बाबा परमहंसजी" 'बाबा'-बाबा" के रटन में ही सारा भजन करते थे लेकिन बाबा परमहंसजी स्वयं कल्याणेश्वरनाथ महादेव, माँ गिरिजामहारानी (फूलहर स्थित), जानकीजी जनकपुर धाम के दर्शन करते थे, और भक्तों को भी दर्शन कराते थे। आर्त्त लोगों को बाबा उपदेश करते सुने जाते थे कि 'कल्याणेश्वरनाथ के कह' "जा गिरिजामाई के दर्शन करऽ", "जे करी कल्याणेश्वरनाथ", "गिरिजामाई से बड़ के के हऽ" आदि।

एक घटना है। बाबा के सेवक, कृपाश्रित एक सेवक श्री राजवल्लभ सिंह (सिंहजी) के नाम से जाने जाते हैं। कलना से ठीक

सामने पश्चिम मैया गिरिजा महरानी का दरबार हैं। वहीं उनका मंदिर है-वहीं है वह बाग-तड़ाग, वह पुष्प-वाटिका स्थल, कष्ट-हरणी जिसके दर्शनार्थ देश के कोने-कोने से राम-भक्त, जानकी-भक्त आते हैं, आने ललायित रहते हैं। बाबा के भक्तों का मानना रहा है कि गिरिजास्थान ही (मैया का) बाबा का हेड-क्वार्टर है। बाबा शरीर से कलना-धाम अपनी कुटिया में रहते मैया के मंदिर में मैया के दर्शन करते कई-बार, कई-एक, द्वारा देखे गये।

उस गिरिजा स्थान की सफाई, बाग-तड़ाग के रख-रखाव हेतु बाबा के आदेश से कार-सेवा में सेवक तैनात किए जाते थे। पोखड़े को गंदा करने या मछली मारने से मनाही करने, औरों के साथ रखवाली करते सिंहजी को एक दिन एक उद्दंड व्यक्ति ने अपने बच्चे की झूठी शिकायत पर आकर सिंहजी की बाँह मसल दी, कुछ अवाच्य कथाएँ भी कहीं। "भक्त बाबा परमहंसजी" को गिरिजा स्थान अथवा किसी भी देव स्थान की पवित्रता के विरूद्ध किए जाने वाले कोई भी दुःस्साहसिक, ढिठैपूर्ण, क्रियाकलाप कतई पसंद नहीं था। पूज्य बाबा द्वारा नियुक्त उस सेवक के साथ किए गए हिंसापूर्ण व्यवहार की सूचना बाबा तक पहुँच गई। बाबा ने तुरंत खबर ली। सिंहजी को बुलाया। पूछा। औरों से बयान लिया। सत्यता तो सर्वदर्शी

प्रभु स्वयं जानते थे। कोमल-चित के भाई सिंहजी ने बाबा से प्रार्थना की कि सरकार उसे माफ कर दिया जाय। क्योंकि सिंहजी को डर था कि उस मूर्ख को कहीं दंड न मिल जाय। किया तो था उसने बड़ा ही उद्दंडतापूर्ण व्यवहार। सिंहजी.का मन मान गया कि उनके प्रार्थना करने पर बाबा ने उस अपराधी का अपराध माफ कर दिया होगा।

बहुत दिनों के बाद एक दिन वहीं गिरिजास्थान में सिंहजी बैठे थे। वही व्यक्ति जिसने सिंह भाई के साथ हिंसक व्यवहार किया था, मंदिर के बगल में एक हाथ से वह एक-एक ईंट उठाकर एक जगह से दूसरी सुरक्षित जगह पर रखते गिरिजा माई, गिरिजा स्थान की सेवा कर रहा था।

किसी व्यक्ति ने सिंहजी से कहा ''सिंहजी, उस आदमी को देख रहे हैं।'' सिंहजी ने कहा ''हाँ देख रहे हैं।'' फिर उसने पूछा ''क्या देख रहे हैं?'' फिर सिंहजी ने कहा ''देख रहे हैं, वहं ईट उठा-उठा कर वहाँ साफ-सुरक्षित जगह पर रख रहा है''। फिर उस व्यक्ति ने कहा ''आप यह नहीं देख रहे हैं कि जिस हाथ से उसने आपको मारा था, वह हाथ ही उसका सूख गया। समूचे गाँव के लोग यह मान गये कि आपको मारने का यह गिरिजामाई का कोप है। सबों ने कहा कि एक हाथ से ही तुम गिरिजामाई की सेवा करो और उनसे माफी माँगो। यह व्यक्ति उसी प्रायश्चित में यह काम कर रहा है''।

सिंहजी महसूस कर गये, उन्हें सब याद आ गया, वे स्वयं काँप गये, कैसी डरावनी दंड-व्यवस्था है। पुनः जब वे बाबा के पास पहुँचे तो उन्होंने पूज्य बाबा के सम्मुख इसकी चर्चा की और बाबा से कहा ''बाबा। उस व्यक्ति ने जो गिरिजास्थान में मुझे मारा था, उसका वह हाथ ही सूख गया जिस हाथ से उसने मुझे मारा था।'' यह कहते उन्होंने बाबा से पूछ दिया ''बाबा! हमने तो विनती की थी उसे माफ कर देने के लिए सरकार। आपने माफ नहीं किया बाबा।'' बाबा ने कहा-''हम की करू? गिरिजामाई नाँ माफ कयलक''।

***

कलना का सहज-योग

''विश्वास करि सब आस तजि
तब दास होई जो नर रहे''

गाँव के गाँव हैं जहाँ बाबा की कृपा से प्रभावित, लाभान्वित लोगों की तायदाद है। बाबा दंत-कथाओं और किंवदंतियों के माध्यम स्मृत हो रहे हैं। लोग अभिमान का अनुभव करते हैं। ''अस अभिमान जाइ नहिं मोरे, मैं सेवक बाबा पति मोरे'' और बाबा संबंधी कथाएँ गा-गाकर, लोगों को सुना-सुनाकर अपने को सुपुष्ट करते हैं कि वे भी 'कलना-बाबा' ऐसे महापुरूष ''दुःखिया सुखदाता'' के सेवक हैं। कहीं भी बाबा संबंधी, उनके संबंध की, चर्चाओं का प्रारंभ हो जाना स्वाभाविक है और इस क्रम में, भावुक-लोग, अपनी अगुआई जताने और अपने को बाबा के संबंध में अधिक जानकारी रखने वाले के रूप में मान्यता प्राप्त करने के लिए अपूर्ण, अपुष्ट्य कथाओं का आश्रय लेते हैं। **यहाँ तो सत्य-कथाओं को याद करने, उन्हें संकलित करने का भी कभी अन्त नहीं होगा परंतु भावुकता में ऐसा हो रहा है कि अपुष्ट अमान्य, गढंत कथाएँ स्थान बना रही**

हैं। मिथिला के गाँव के गाँव, नेपाल में, जगह-जगह, भागलपुर, छपरा आदि जिले के अंदर-अंदर में टोली के टोली लोग बाबा-कथा में रूचि-प्रीति रखने वाले हैं।

कलना-बाबा का दरबार तो निरक्षर, मूर्ख, दीन, हीन, हल जोतने वाले, कुदाल-चलाने वाले से लेकर सभी स्तर, सभी प्रभृति, किसी भी पेशा के, किसी के लिए भी एक समान स्थान रखता था। **किसी को भी धोखे से भी ऐसा अनुभव होने का मौका कभी नहीं मिला होगा कि कलना बाबा के दरबार में धन, संपत्ति, प्रभुता, पद, ओहदे के कारण किसी को ऊँचा स्थान और अन्य किसी को उससे नीचा स्थान मिला। वहाँ तो दानी, गरीबनाथ, बाबा के सामने सब अकिंचन, याचक, आर्त्त, दुःखिया, भक्त, सेवक ही रहते थे। और हर दुःख दैहिक, दैविक, भौतिक-का निदान था। यदि उनकी कृपा हो जाती तो असंभव संभव था।**

सुबह सोकर उठें शौचादि से निवृत होकर स्नान कर लें। फिर उपदेश से मिला अथवा स्वयं रूचता जो भगवद् नाम हो उनका स्मरण, जपन करते अपने कर्त्तव्य कर्म में लग जाएँ। हल जोतें, मवेसी सेवा करें, अन्यान्य गृहकार्य करें, पढ़ें, पढ़ावें, कार्यालय जाएँ जिन्हें जो दायित्व हो उसके निर्वहन में लग जाए। प्रतिकूलताओं, कष्ट, आपदा का

ईश्वरनाम लेते यथासंभव सामना करें। ईमानदारीपूर्वक, धैर्यपूर्वक जो भी संभव हो, जिस तरह भी संभव हो, जो भी स्थिति हो ईश्वर के विधानानुकूल उसे मानते उसे स्वीकार करते उसमें सुधार, उन्नति के लिए प्रयत्नशील रहें।

शुचिता से ही प्रभु के नाम उनकी उपासना है, आराधना है। किसी भी विद्या की पढ़ाई, किसी भी योग के अभ्यास, किसी भी धंधे के अवलंबन से मनाही मिलते नहीं पाया। लेकिन सफलता के लिए, शांति के लिए, चैन के लिए शास्वत ऊर्जा के श्रोत से अपना लगाव आवश्यक है। ईश-भजन, सत्य, सदाचार, शुचिता, क्रोध का अभाव, विनय, नम्रता, प्रेम, दया, क्षमा और अपने को ईश्वरार्पित कर इन दैवीय सद्गुणों से युक्त बनाने हेतु प्राथमिक चर्या में निष्ठित करने ही कलना की आश्रम-व्यवस्था आश्रय-योग्य रही।''

''धैर्य, सत्य, शील, बल, विवेक, दम, परोपकार, क्षमा, दया, समता भाव, ईश भजन, वैराग्य, संतोष, दान, निर्मल मन, सम-दम-नियम, ब्राह्मण, गुरू की पूजा।

जो किसी भी तरह चिकित्सक के पास जाने की स्थिति नहीं रख रहे थे, चिकित्सकों से थक चुके थे, उन्होंने बाबा पर, उनकी कृपा पर अपने को छोड़ दिया-स्वस्थ हुए। नहीं तो अस्वस्थता को स्वीकारने उसमें जीने हेतु अतिरिक्त बल मिला-प्रभु पर भरोसा, उन पर विश्वास, जिस स्थिति को बदली नहीं जा सकती उसे स्वीकारने का साहस, उसमें जीने हेतु उच्चतर दर्शन।

अपनी शक्ति, अपनी पहुँच, अपने प्रयत्न, अपने सामर्थ्य, अपने अन्यान्य भरोसे से भ्रांति-मुक्त जो था उसने बाबा के नाम भजन, उनके आश्रय से, उनपर निर्भर करते, विश्वास करते ऐसा सबकुछ पाया जो कुछ भी नहीं रहने पर, सब तरह से निरावलंब रहने पर भी जीवन के मिशन के प्रति सशक्त, सबल बनाता है।

> ''विश्वास करि सब आस तजि
> तब दास होइ जो नर रहै''

उसे जो मिलना चाहिए, सब मिलता जाता है। जो नहीं मिलना चाहिए, जिसे वो पचा नहीं सकता, जो उसके लिए हितकर नहीं है, जिसके लायक वह नहीं है, वही उसे नहीं मिलता है। ईश्वरेच्छा ही उसका दर्शन रहता।

''दैवइच्छा परम बलम्'' अपने मुताबिक अपने को पाने की चेष्टा समाप्त हो जाती है। सारे स्ट्रैस, स्ट्रेन का अंत हो जाता है। अपने

से हीन के प्रति निरादर के भाव मिट जाते। किसी भी अप्रिय स्थिति के लिए आदमी को कोसने, दूसरे पर दोषारोपन करने, भगवान को कोसने की प्रवृत्ति खतम हो जाती। कर्मफल के सिद्धान्त के प्रति आस्था बनती है। प्रभु से जुटे डोर, विश्वास के डोर के सहारे-सर्वशक्तिमान के दास होने के बल पर-निर्भय, शांत, निर्द्वंद जीवन जीना होता है। **जहाँ सभी आश्रयों की निर्भरयोग्यता का अंत होता, वहीं से विश्वास-स्थल, विश्राम-स्थल कलना की कामधेनुमयी-शक्ति के अवलंब लाभ के मिलने की शुरूआत होती है।**

***

क्या परमहंस की भी वासना होती है

कुटीचक्र, वहद्क, हंस और परमहंस-आश्रमी सन्यासियों की चार श्रेणियों में परमहंस सबसे उच्च-कोटि के माने गये हैं। रामकृष्ण परमहंस तो उच्च-कोटि के सन्यासियों में थे।

परंतु स्वामी रामकृष्ण परमहंस के भोजन के संबंध में उनके अत्यंत लोलुप होने का आख्यान मिलता है। रामकृष्ण भोजन के लिए सब्र और प्रतीक्षा नहीं कर पाते थे। भोजन के संबंध में उनकी लोलुपता और आतुरता उनके शिष्यों को भी खलती थी। पत्नी शारदा तो अपने पति की भोजन-संबंधी इस आदत से लज्जित हो उठती। एक दिन शारदा ने उन्हें कह ही दिया **''भोजन के लिए वासना पर आप संयम क्यों नहीं कर पाते। ब्रह्म-चर्चा छोड़कर आप अन्न-चर्चा में प्रवृत हो जाते हैं।''**

रामकृष्ण ने शारदा को समझाया, शारदा। ''मेरी सारी वासनाएँ समाप्त हो चुकी हैं, सारी इच्छाएँ लुप्त हो गयी हैं। इस संसार में रहने का कोई अर्थ नहीं रह गया है। चूँकि जगत के हितार्थ अभी मैं पृथ्वी पर रूके रहना चाहता हूँ इसीलिए एक वासना उसी तरह जबर्दस्ती

पकड़े हुए हूँ जैसे किसी नाव की एक छोड़ को छोड़कर उसकी सारी जँजीड़ें खुल जाएँ तो भी वह नाव उसी एक जंजीर के सहारे किनारे से बँधी रहेगी, अटकी रहेगी। उसके खुलते ही, उसके टूटते ही वह नाव अनंत यात्रा पर निकल जायगी। सीता-हरण हुआ तो राम रोये थे, बस यही उनकी एक वासना थी जिसके सहारे वे पृथ्वी पर लीला कर रहे थे। शारदा, ज़िसी दिन मेरी यह एकमात्र वासना ढ़ीली पड़ेगी मैं भी अनंत यात्रा पर निकल जाऊँगा''। और ऐसा ही हुआ।

कलना बाबा परमहंसजी तो आश्रमी भी नहीं थे, लेकिन हम सबके कारण वे आश्रमी से ही थे। सबके बाल-बच्चे, जीवन-जापन से मतलब रखते थे, सुधि लेते थे। ''सहि दुःख आपहि करे उधारा''। **लोगों के सुनने के लिए, उन्हें त्राण देने के लिए ही वे थे। उनका उद्धार करना ही उनकी लीला थी।** इसमें शुरू के दिनों में अरवा चावल का भात, रहड़ी के दाल और घी से बाबा बहुत रूचि रखते थे। एक दिन किसी ने कुछ खड़ी-खोटी सुना दिया। दूसरे के घर पर गये और उससे घी माँगकर उसे आग पर गर्म कर उससे मुँह को, जीह को जला दिया। मुँह में घाव आ गया। सत्य-कथा है। **इस एक वासना तक को बाबा ने पनाह नहीं दी। वस्त्र के नाम पर तो लांक लज्ज्यार्थ एक टुकड़ा पहनने के लिए, बस।**

जनकपुर में इस कुटिया-उस कुटिया में घूम-घूम कर कभी-कभी खा लिया करते थे। बहुत खाते थे। यह भी किसी-किसी ने कहीं-कहीं कह दिया कि बहुत खाता है।

श्री राजवल्लभ सिंह जी, कलना आश्रम-वासी एवं पं० श्री चन्द्रकान्त झा जी को समय-समय पर बाबा ने ये सुनाए-'परमहंस प्रभा' के माध्यम भी कुछ प्रकाश में आया था। रामगुलाम दास जी नेपाल की पत्रिकाओं के माध्यम भी ऐसा प्रकाशित कर चुके हैं।

अयोध्याजी में तो एक दो अखाड़ों में, कुटियों में बाबा ने इस कारण खाना अस्वीकार कर दिया कि वे लोग जिनको खाना देते थे उनसे काम करवाते थे। पूज्य-बाबा को किसी कुटिया में एक-दो शाम खाने दिया फिर इनसे कहा काम करने को। उन कुटियों में मंत्र लेनें, दीक्षा लेने की भी वाध्यता उन लोगों के लिए रहती थी जो वहाँ से भोजन वसन अथवा आश्रय की आशा करते थे। बाबा ने खाना ही बंद कर दिया और वो कुटिया छोड़कर पोखड़े के एक भींडे पर पेड़ के तले बिना खाये-पीये रहना शुरू किया। भजन करते रहते थे। बाबा के पास एक ही टुकड़ा पहनने के लिए था। बस नहाने के बाद आधा सूखाकर, सूखा भाग पहनकर, भींगे भाग को सुखाते। इस तरह कुछ दिन उनके बीत गए। उसी कुटिया के महात्माओं ने ऐसा करते उन्हें

देखा कि बिना खाए-पीए उसी पेड़ के तले बिना वस्त्र के रह रहे हैं और भजन करते रहते हैं तो उनलोगों ने महंथजी से जाकर कहा। महंथ ने बाबा से काम करने कहा था। आश्चर्यित हो बाबा के इस तरह रहने की खबर पाकर महंथजी ने जाकर बहुत आग्रह किया बाबा से चलने के लिए लेकिन बाबा ने आग्रह नहीं माना।

ये स्वयं बाबा के मुखारविंद से सुनी बातें हैं। इसी के बाद सरयू नदी में स्नान करते समय प्रायः रामजी के दर्शन हुए और उनकी आज्ञा हुई कि तुम जनकपुर जानकीधाम जगज्जननी के यहाँ चले जाओ।

जो भक्त, भाई, बाबा की अचरजकारी महिमा-दर्शन, उनसे अनुप्राणित होने के स्वयं साक्षी हैं, उन्हें तो ये कथाएँ सुनकर आश्चर्य नहीं ही होगा। बल्कि उन्हें इन सब बातों को यदा-कदा पढ़ते, अपने गुरूदेव के दिव्य परंतु मात्र-अनुभव्य उनके विराट रूप का स्मरण होता रहेगा। **विस्मरण की स्थिति में स्मृत करा देना, सुमिरन करा देना-यही तो महत्व है विनतीपूर्वक इन कथाओं के कहने का। यही हमारा भजन है।**

इन्हीं सारी अवस्थाओं से गुजरते कच्चे फल खाते बाबा अंत में पकाये हुए फलाहार पर आये। और जब-जब भंगिमा कुछ वैसी बनती तो कहते "ना अब ए देश में ना रहब"।

***

भोले का वास कैलाश

"याम्ये सिद्धि-प्रदं लिंगम् कल्याणेश्वर नामकम्"

(बृहद्-विष्णुपुराण)

कलना-धाम तो अति-प्राचीन काल से ही कल्याणेश्वरनाथ महादेव का चिर-स्थल है। वृहद्-विष्णुपुराण में लिखा है कि कल्याणेश्वरनाथ के लिंग सिद्धि-प्रद हैं। यहीं आकर बाबा परमहंसजी की भी कल्याणकारी लीलाएँ होने लगीं। कलना-धाम बाबा परमहंसजी का भी लीलास्थल बन गया।

स्वयं काल-भैरव के मंदिर से जोर-जोर की आवाज में आकाशवाणी हुई। लोगों ने सुना। **आकाशवाणी के माध्यम काल-भैरव ने आवाज दी कि "ये परमहसं हैं"। उसी दिन से इन्हें परमहंस बाबा कहकर लोग पुकारने लगे, सुमिरन करने लगे।**

"तीर्थी कुर्वन्तितीर्थानि" (भक्तिसूत्र)

भक्ति-सूत्र में लिखा है कि संतों का वास जिस तीर्थ में होता वह तीर्थ भी महा-तीर्थ हो जाता। एक तो कलना स्वयं ही सिद्ध-स्थल, कलना कल्याणेश्वनाथ महादेव का सिद्धि-प्रद लिंग मंदिर में और

फिर कहाँ "आशुतोष और [illegible] " बाबा परमहंसजी का घर

पूर्व में ही सिद्ध उस सिद्ध धाम पर जब आशुतोष स्वयं कर-खेल के बाबा काम कर रहे थे तो कैलाश कहाँ न हुआ। "भोले का धाम कैलाश"।

इसीलिए प्रायः बाबा भी अक्सरहाँ कहा करते थे "लोग के आँखें न है वे देखें। कैलाश तो इहाँ हर-इहाँ"।

***

"कलना-बाबा" और "बाल-कांड पाठ"

आज विवाह-पंचमी जानकी विवाहोत्सव का शुभ मंगल दिन है।

"उपबीत ब्याह उछाह मंगल
सुनिजे सादर गावहीं।
बैदेहि राम प्रसाद ते जन
सर्वदा सुखु पावहीं"

"सिय रघुबीर विवाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं
तिन्ह कहँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु"

पूज्य बाबा संबंधी लीला-संस्मरण को लिपिबद्ध करने के क्रम में आज के दिन और ही विशेष रूप से स्मरण आता है कि "बाल-कांड" पाठ बाबा परमहंसजी का कितना प्रिय था। अक्सरहाँ उपदेश होता था। रामचरित मानस के "शिव-विवाह" प्रसंग का पाठ, "राम-जानकी विवाह" प्रसंग सब तो बालकांड में ही है। कहीं भी किसी के परिवार में मंगल उत्सव का अवसर रहता था, संपूर्ण रामायण-पाठ यदि नहीं तो कम-से-कम "बाल-कांड" का पाठ कर लेने या किसी से करवा लेने की विधि से लोग बाबा को प्रसन्न

करते, उनकी प्रसन्नता की कामना करते थे। एक दो दिन बाबा के श्रीमुख से मैंने भी सुना ''रामायण के आदि आ अंत, जे पढ़े से होय संत''। कुँवारी लड़कियों के अभिभावक को भी उपदेश मिलता था कि ''गिरिजा-पूजन'' प्रसंग का पाठ कुँवारी लड़की करे। बाल-कांड में ही तो ''संत महिमा'' ''नाम-माहात्म्य'' आदि सब है।

पाठक, सेवक, भक्त, अपने कल्याण, अपने लाभ, अपने उन्नयन के हेतु इनके आश्रय-सेवन करते हैं। रामायण का तो एक-एक शब्द, इसका एक-एक दोहा मंत्र है। **संत तुलसीदास के इस महाकाव्य के माध्यम हनुमान जी की कृपा का ही तो प्रवाह है।** चाहे यह कांड हो या वह कांड हो-सब का अपना-अपना महत्व, किसी से कम कोई नहीं। **परंतु सद्‌गुरू, उपदेशक की महाशक्ति उनके उपदेश के पुट में छिपी रहती है। उपदेशित नाम के भजन के माध्यम, उनके द्वारा रेखांकित अंश के पाठ के वाचन के माध्यम उपदेशक सद्‌गुरू की शक्ति, उनकी महाकृपा प्राप्त होती है।** भिन्न-भिन्न स्थिति में सामान्य रूप से यह सबों से अनुभूत है कि बाबा परमहंसजी महाराज को बाल-कांड विशेष रूप से प्रिय था।

***

कलना-बाबा एवं कबुला

वर्तमान पीढ़ी के लोगों में जिन शास्वत, नैसर्गिक मूल्यों के प्रति आस्था नहीं रह चुकी है, संकट, कामना, असाध्य स्थितियों से पाला तो उनके जीवन में जरूर ही उन्हें पड़े रहते हैं। बस इन स्थितियों में जब वे आर्त्त होते हैं और उनके पूर्व के अच्छे कर्म उनके साथ देते तो संतों की, देव-ऋषि द्वारा निर्धारित विधियाँ, उनकी वाणियाँ ऐसा संयोग बनने पर, उनके त्राण में काम देती हैं और चमत्कारी अनुभव मिलता है जो उन्हें फिर आस्तिक बना देता।

कलना में तो ''बोलते-महादेव'' बाबा परमहंस जी ने बस यही प्रायः किया। तुलसी में, वासुदेवजी में सादर समर्पण के साथ जल देने, ब्राह्मणों को तुष्ट-तृप्त करने, ईश्वर की आराधना में अपने सम-यम, दम के माध्यम अपने को तपोनिष्ठ करने, नाम-आश्रय, हनुमान-चालीसा पाठ आदि-आदि के आश्रय-ग्रहण के प्रत्यक्ष फलों का ज्ञान कराने ही तो प्रायः उनकी संपूर्ण लीला थी। इसमें ''कबुला'' का भी बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रहा।

कोई बहुत आर्त्त रहता था-उससे गिरिजा माई, बाबा कल्याणेश्वरनाथ के नाम बाबा कबुला कर देने कहते थे और फिर

कामना पूरी होने पर, संकट टल जाने पर लोग कबुला हाजिर कर देते थे।

लाख अथवा करोड़ रूपये की गणणा नहीं हो सकती है। परंतु कलना एवं गिरिजा स्थान के सारे कार्य करीब-करीब ''कबुला'' के ही पैसे से हुए हैं। अपने सामर्थ्य के अनुसार लोग कबुला (चढ़ौना) मनौती करते हैं, करते थे और आज भी करते हैं और संकट टल जाने पर उसे हाजिर कर देते जो विभिन्न विकास कार्यों में लग जाता।

किए हुए कबुला, कभी के, जो आपको आज याद नहीं रह रहा है, और आपने हाजिर नहीं किया वह आपके संकट का आज कारण बन जाता है। दिन-रात इन सत्यताओं को उस तरह की स्थितियों के उपस्थित होने पर बाबा दर्शाते थे, याद कराते थे, महसूस कराते थे और कबुला के प्रति आस्था, विश्वास जगाते थे।

स्थानाभाव के कारण एतद्-संबंधी संस्मरण नहीं प्रस्तुत किया जा पा रहा है। **''कलना-बाबा'' की कथा चर्चा के संदर्भ में ''कबुला'' का विशेष माहात्म्य है। आर्त्त लोग कबुला करते हैं और कबुला के संबंध में किसी भी तरह की ढ़िलाई न हो, सावधान, सचेष्ट रहते हैं।**

***

बाबा परमहंसजी अंतर्यामी थे : साक्षात् शिव थे

(माननीय महंथजी, जानकी-महल, जनकपुरधाम)

वैसे तो अनगिनत लोग हैं ही जिन्हें यह अनुभव और एहसास करने का सुयोग, सुअवसर मिला कि बाबा परमहंसजी ''कलना-बाबा'' शिव के अवतार थे, अंतर्यामी थे तथापि जनकपुर- धाम निज जानकी मंदिर के माननीय महंथजी का एक संस्मरण प्रस्तुत है। मेरे साथ भेंट-वार्त्ता के क्रम में स्वयं महंथजी ने अपना यह संस्मरण मुझे सुनाया था।

कला-धाम से सटे दो कीलोमीटर के अंदर उमगाँव के नजदीक हटवरिया-मोहनपुर नाम का एक ग्राम हैं। वहाँ जानकी मंदिर की जमीन-जायदाद है, ''महंथाना'' है। एक समय बटाईदारों द्वारा वहाँ की जमीन पर घोर संघर्ष उपस्थित हो गया था। बात यह वर्तमान महंथजी के उनके गुरू के समय की है। मोहनपुर की स्थिति की सूचना मिलने पर महंथजी को मोहनपुर जाकर स्थिति को नियंत्रित करने, संभालने का गुरू महाराज का आदेश हुआ।

महंथजी मोहनपुर आये। एक दिन स्थिति अत्यंत ही विकट, नियंत्रण से बाहर की हो गई। किंकर्त्तव्यविमूढ़, महंथजी दिन के

12-1 बजे बाबा परमहंसजी के यहाँ हाजिरी-देने, शांति और सुलह हेतु प्रार्थना करने चल पड़े । गर्मी का समय था । चिलचिलाती धूप में महंथजी पैदल ही पैदल, खेतो-खेत उस दोपहर में चल पड़े। जोड़ों की प्यास लगी। प्यास से व्याकुल रास्ते भर चलते आये। रास्ते में कहीं पानी नहीं मिला। कलना पहुँच गये। पोखड़े में पैड़-हाथ धो बाबा की कुटिया में हाजिर हुए। वे कुछ भी बाबा से निवेदन करते इससे पहले बाबा नें ही जनकपुर का कुशलादि पूछते सर्वप्रथम पानी से भरा एक लोटा महंथजी को थम्हा दिया और कहा ''जा ! पहिले पानी पीऽ लऽ''। महंथजी, नियमानुकूल, घाट पर गये, पानी पिया परंतु ज्यों-2 पानी की घूँट पीते गये, प्यास बुझती गयी त्यों-त्यों मन-ही-मन विचित्र तरह के विश्मय-भाव से वे लदते गये। कैसे बाबा नें तत्क्षण, उनकी प्यास जान ली एवं सर्वप्रथम प्यास शांत करने के लिए पानी से भरा लोटा थमा दिया ? दूसरी बात तीव्र प्यास की स्थिति में पानी वैसे ही जान-रक्षक मधुर होता है। उसमें भी बाबा के द्वारा दिए गए लोटे का वह जल गंगाजल के स्वाद का उन्हें लगा। उन्हें ऐसा लगने लगा जैसे वह गंगाजल ही था। इस तरह प्यासे रहने की उनकी स्थिति को बाबा द्वारा स्वतः जान लेना एवं दिए गए पानी का स्वाद गंगा-जल-सदश रहना-दोनों बातों ने महंथजी को एहसास करा दिया कि बाबा अंतर्यामी हैं, साक्षात शिव ही है।

अपना यही संस्मरण माननीय महंथजी नें 2004 ई० में मुझे, एक भेंट के क्रम में, सुनाया था।

***

''की कहू ! जावे बाबा शरीर सँ रहथि तावे नैं चिन्ह सकलिऐन्ह जे बाबा महादेव छथि ''

पंडित बैद्यनाथ झा, कौवाहा।

इसी वर्ष 2006 ई० के नवरात्रा में नवाह्न-पाठ करके गिरिजा-स्थान से कलना वापस आने पर कौआहा के उन्सठ वर्षीय श्री वैद्यनाथ झाजी नें अपना एक संस्मरण सुनाते उक्त बात कही।

बाबा के शरीर छोड़ने के मात्र 2-3 वर्ष पहले एक दिन दिन के 3-4 बजे वैद्यनाथ झाजी बाबा के फलाहार हेतु अपने घर से नियमपूर्वक एक लोटा दूध लेकर कलना पहुँचे। बाबा उस सयम अपनी कुटिया के मुँह पर फट्टक के नजदीक बैठे हुए थे । कुटिया के बीच घर में, खंभे के सटे, बराबर एक मिट्टी का कोहा रहता था। बाबा बैठे थे। वैद्यनाथ जी नें कहा ''बाबा, ई दूध अनलौँ हैं, सरकार''। बाबा नें कहा ''लावऽ''। वैद्यनाथ झा झुकते हुए कुटिया में प्रवेश करने आगे बढ़े तो देखा कि एक भयंकर नाग फन काढ़े बाबा के बगल उस कोहे के सटे बैठा है। वैद्यनाथ झा ने डरते हुए एकाएक सीधे पीछे हँटते जोर से कहा ''बाबा! बाबा! साँप बाबा''। बाबा नें कहा ''आवऽ। कहाँ है कुच्छो''। बस, बाबा के इतना कहते

ही वह सर्प उसी कोंहें में प्रवेश कर गया'' वैद्यनाथ झा सहमते गये, दूध बाला लोटा रक्खा। बाबा नें उसी कोहे में हाथ देकर उसमें से दो छोंहाड़ निकाले और वैद्यनाथ झा को प्रसाद दिया और घाट पर जाकर खा लेने को कहा। वैद्यनाथ झा गये, घाट पर प्रसाद खा लिया। जो देखा किससे कहते ? फिर आए, बाबा के पास बहुत देर बैठे।

अचंभा, आश्चर्य, भय की ये सब बातें किससे कहते ? सहजरूप से, बाबा के नजदीक पुनः आकर बैठने के बाद, यही भाव बन सका कि ''बाबा नागेश्वरनाथ हैं।''

यही उन्होंने मुझे सुनाया जब वे गिरिजा स्थान से कलना होते घर वापस जा रहे थे।

***

कृतज्ञता-ज्ञापन

पूज्य बाबा के भक्तों द्वारा चिर-प्रतीक्षित, चिर-काँच्छित उनकी जीवन-लीला पर आधारित प्रकाशन के स्वरूप में कुछ भी अंकित करने से, प्रस्तुत करने से, पहले उन सभी बन्धुओं की याद सहसा आ जाती है जो पूज्य बाबा की अर्चना, आराधना के क्रम में पूर्व में ही भिन्न-2 परमहंस चालीसा, आरती, भजन-संग्रह आदि-आदि का प्रकाशन कर चुके हैं। परम-धाम वासी स्व० भाई रामगुलाम दास जी नें तो अविस्मरणीय सेवा जीवन-पर्य्यंत दी। शोध-परक उनके आलेख नेपाल एवं भारत की मासिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। बाबा-चालीसा, भजन आदि के रूप में उनकी रचनाएँ बाबा के सेवकों के घर-घर में दैनिक पाठ-भजन में गाये जाते हैं, भजे जाते हैं। काठमांडौ विश्वविद्यालय के अंग्रेजी के प्राध्यापक लोकेशदत्तजी की बहुत पूर्व में ही प्रकाशित एक पुस्तिका किसी भी जिज्ञासु एवं प्रस्तुत विषय पर शोध-परक मानसिकता के व्यक्ति के लिए अवलोकनीय होगी। कलना ग्राम-वासी परम-प्रिय श्री वशिष्ठ जी के भजन-संग्रह के अवलोकन से तो कोई अज्ञात व्यक्ति भी इसकी गहराई में गये बिना रह नहीं सकता कि उन्नीसवीं शताब्दी में

मानव-काया धारण किए, मानव-रूप में "ठाकुर- शुक्ल प्रयाग सुत" कलना बाबा क्या साक्षात शिव-रूप ही नहीं थे? कौन-कौन, कहाँ-कहाँ, किस-किस रूप में, किन-किन प्रभृतियों के लेखन एवं रचना कार्यों में स्वान्त:-सुखाय लिप्त हैं इसकी गणणा असंभव है। परंतु आनेवाली पीढ़ी के प्रेरणार्थ इसकी आवश्यकता सर्वमान्य सी लगी है कि कम-से-कम, अलग-अलग अपने-अपने निजी संस्मरणों को ही (अन्यान्यों के संस्मरणों को भी आनुसंगिक बनाते) यदि प्रकाशित रूप देकर रख दिया जाता है तो भविष्य की पीढ़ी को उसका अवलोकन करते आध्यात्मिक मूल्य के उन विशिष्ट पटलों को ढूँढ़ने, चिह्नित करने एवं अपने आध्यात्मिक उन्नयन को दिशोन्मुख कर सकने का सौभाग्य अर्जित करने कलना की मिट्टी का नमन, इसके सुन्दर-सर में भज्जन एवं बाबा परमहंसजी के नाम-भजन में अपनी सारी आशाएँ निष्ठित कर देने हेतु ईश्वरीय प्रेरणा प्राप्त होगी। इसी अर्थ में ऐसे प्रकाशनों की प्रसांगिकता बनी है। जन-श्रुतियों के रूप में चल रही बाबा संबंधी कथाएँ भिन्न-भिन्न प्रकाशनों के माध्यम आनेवाली पीढ़ी-दर-पीढ़ी के लिए संचित कर रख दी जाय-इसकी जरूरत है एवं एतद् संबंधी रिक्तता खलती रही है। दिन-ब-दिन खटकती जा रही है।

बाबा के शरीर-त्याग किए अभी चौदह वर्ष ही हुए हैं। उनके समकालीन अभी भी कहीं-कहीं हैं। वर्षों-वर्ष उनके सानिध्य में रहे, यदा-कदा उनके श्री मुख से उनकी अपनी बातें सुनने का कृपा-लाभ प्राप्त किए सेवकों की अभी कमी नहीं है जिनसे जो भी ज्ञातव्य होगा, प्रामाणिक माना जायगा। **अन्यथा जन-श्रुतियाँ किंवदंतियों का रूप पकड़ती जा रही हैं जो भविष्य में वास्तविक, तथ्य-परक सूचनाओं से भिन्न की किंवदंतियाँ ही रह जायेंगी। यह सिर्फ इस कारण होगा कि सक्षम एवं समर्थ हाथों द्वारा बाबा के जीवन काल संबंधी प्रामाणिक लेख-पुस्तक का निर्माण नहीं हो सका।**

मुख्य-विषय पर रहते कुछ विषयान्तर होने लगा। श्री जनकपुर-धाम रामपुर (कुआ) ग्राम वासी भाई रामचन्द्रजी ने तो ऐसी महाशुरूआत की थी कि "तू अनंत तब कथा अनंता" बाल-ब्रह्मचारी संत हमारे बाबा की कथा-गाथा का निर्झर, निर्मल प्रवाह नियमित उनकी स्मृति में समर्पित जनकपुर से प्रकाशित पत्रिका "परमहंस-प्रभा" के माध्यम प्रवाहित होता रहता। परंतु जो होता है, अच्छा ही होता है और उन्हीं के चाहने, नहीं चाहने, से होता है। वे जो करते हैं, मंगलाय् ही करते हैं। पत्रिका का प्रकाशन नियमित तो नहीं रह सका लेकिन इसने जगह-जगह बाबा संबंध में और जानने की जिज्ञासा जानते रहने

की इच्छा एवं आवश्यकता उत्पन्न कर दी तो कहीं इस चुनौती को भी समझने, परखने और इसका आकलन करते रहने का प्रश्न उपस्थापित कर दिया कि क्या कोई पत्रिका प्रकाशन नियमित रहना संभव नहीं था? क्या ऐसे-ऐसे प्रकाशन प्रासंगिक नहीं हैं? कलना के संदर्भ में यह एक यक्ष प्रश्न रहा है।

जनकपुर से प्रकाशित उक्त पत्रिका के वितरण के क्रम में पाठकों से बहुत तरह की जिज्ञासाएँ लोगों की मेरे सामने भी आईं। वैसे भी आप कहीं भी अन्यान्य जगहों पर, अन्यान्य लोगों के साथ हों-आपसे कलना की, अपने बाबा की चर्चा हो जाना बहुत ही स्वाभाविक है। दिन-दो दिन आप कहीं भी रहें अवश्यंभावी, अपरिहार्य हो जायगा कि आप अपने बाबा की महिमा, कलना के माहात्म्य की चर्चा कर बैठें। बहुत सारे प्रासंगिक प्रश्न आपसे लोग पूछ सकते हैं-यथा-क्या ये सब आप जिन बाबा के संबंध में कह रहे हैं-वे क्या आदमी रूप में थे या काल्पनिक कोई गाथा है? क्या बाबा हैं ही? यदि नहीं तो क्या आपलोग अब भी जाते हैं कलना? यदि हाँ तो अब क्यों जाते हैं-अब तो आपके बाबा नहीं हैं? क्या बाबा के स्थान पर दूसरे बाबा अभी तक आए हैं कि नहीं? इस तरह के आनुसंगिक अनेक प्रश्न जिज्ञासारूपक आपके सामने आएँगे-बाबा का विश्व-कल्याण के लिए क्या संदेश है? बाबा का, यदि उनके माता-पिता थे तो, फिर ऐसा कैसे हुआ कि .... ? अंत में जन्म-स्थान अमही से लेकर कलना में महाप्रयाण तक के इस लंबे काल का क्रमवद्ध ज्ञान, इसकी जानकारी भी किसी की जिज्ञासा का विषय होगा। **जिज्ञासाएँ जानकारियाँ प्राप्त होने पर ही प्रायः 'परतीति' का रूप धारण**

करती है और 'परतीति' विश्वास के रूप में स्थिर होती हैं। इसे प्राप्त करने के पहले और प्राप्त होने के बाद स्थिर रखने के लिए जिन साधनों की जरूरत होती है उनमें तो जीवन-लीला का गायन, भजन, श्रवण, पाठन सर्व-सहज और सर्वप्रमुख माना जा सकता है।

फिर एक बात। मुझे शास्त्र, पुराण, अथवा वेद-उपनिषद का न ही कोई ज्ञान है न ही कोई साधना का बल है परंतु सामान्य श्रोता, पाठक के रूप में जितना सुनने के लिए, समझने के लिए, मिला उससे अंतिम निचोर यही प्राप्त हुआ कि भगवान के अवतार का प्रयोजन-दुष्टों का नाश, गो-द्विज की रक्षा करना, धर्म का पुनरूत्थान-यदि था तो उससे प्रमुख नहीं तो उससे कम प्रमुख यह भी नहीं था कि प्रभु ने नर-रूप में अवतार लेकर जो भी लीला-कार्य किए उसे पढ़कर, सुनकर, सुनाकर किसी का भी कल्याण होगा। यत्र-तत्र-सर्वत्र-बाल्मिकी रामायण, मानस, अध्यात्म, गीता एवं अन्यान्य देव-ग्रंथों, वेद-ग्रंथों-से यही निचोर प्राप्य है कि जो मेरी कथा का श्रवण करेगा, दूसरों को सुनायगा उसका कल्याण होगा। नवधा भक्ति में तो भक्ति के नौ पटलों में एक यही है "जो मम कथा निरंतर, करई कपट तजि गान"। "दूसरि रति मम कथा प्रसंगा"

तो मुझे ऐसे लोगों से भेंट है, उनका परिचय है जो राम, कृष्ण, महादेव, पार्वती, दुर्गा, काली, भैरव, हनुमान सबके भक्त हैं परंतु सबमें अपने बाबा के ही दर्शन उन्हें हुए और हो रहे हैं। उनकी पूजा वे अपने बाबा के प्रीत्यर्थ ही करते हैं। अपने

मन-मंदिर में अपने बाबा की अराधना में ही उन्हें सभी देवी-देवता पूजित हो रहे अनुभव होते हैं। राम और रामायण, दुर्गा और उनकी सप्तशती, हनुमान और उनका चालीसा, महादेव एवं उनकी अर्चनाएँ यदि वे करने की प्रेरणा पाते हैं तो बस बाबा की कृपा भर। उनसे पूछिए-आपके राम कौन, कौन आपके हनुमान तो वे कहेंगे 'बाबा'-बाबा परमहंसजी-कलना बाबा।

तो क्या इस बाबा, ऐसे बाबा की कथा-लीला के श्रवण, गायन का माहात्म्य हम जन-जन के लिए वैसे ही हितकर नहीं है जैसा किसी अन्य सत्संग-साधन का? क्या बाबा ने लीलाएँ की? उत्तर होगा, हाँ की। कहाँ रावण को मारा, कहाँ किसका उद्धार किया? उत्तर होगा-सैंकड़ो-सैंकड़ो का दर्शन देकर उद्धार किया, वाणी देकर उन्हें उत्प्राणित किया एवं क्षण-क्षण, पल-पल सेवकों, आश्रितों के हृदय-मंदिर में निवास करते क्रमशः, शनैः-शनैः नास्तिकता के दुष्ट का आस्तिकता के भाव से, अनास्था के जीवन में आशा और विश्वास का श्रृजन करते जन-जन को, जनम-जनम के लिए, देव इच्छा, भगवद् प्रीति के मंगल-सूत्र में बाँध दिया। भक्ति उनके लिए साध्य बन गया, विश्वास का साधन मिला। आपदा में, संकट में, क्षण-क्षण बाबा ने भक्तों को अपने से छूटने नहीं दिया-सनातन मूल्यों के उपदेश में स्थिर होते जाने का जो राज-मार्ग व्यक्ति-व्यक्ति को मिला इसी का संस्मरण व्यक्ति-व्यक्ति में की गई उनकी लीला की गाथा है। यह हमारे लिए किसी भी तरह कम महत्व का नहीं है। हमारा विश्वास है कि अपने बाबा की कथा-लीला के श्रवण-भजन, कीर्त्तन के समान हितकारक हमारा कुछ नहीं है। ''मद्भक्ताः यत्र गायन्ते तत्र तिष्ठामि नारद ।''

को यह महसूस करने का मौका नहीं मिला

क्या हम प्रत्येक को यह महसूस करने का मौका नहीं मिला
क्या हम सब को ऐसा अनुभव करने का
कि बाबा अंतर्यामी हैं? क्या हम सब को ऐसा अनुभव करने का मौका नहीं मिला कि हमसे हजारों कोस दूर रहते हुए भी वे हमारी रक्षा करते थे। हमें दिशा-निर्देश देते थे। क्या हमने कभी अनुभव किया है कि बाबा हमारे बीच सशरीर आज भी नहीं हैं? हमें इसे मानने में क्या कुछ संदेह भी रह गया कि बाबा की कृपा हो तो 'पंगु चढ़ै गिरिवर गहन' असंभव संभव है? क्या यह बात नहीं है कि बाबा की वाणी, उनके उपदेश का हमनें जितना ही ख्याल किया है, जितनी ही उनमें हमारी प्रीति अथवा निर्भरता रही है उतने ही हम साधु-संत, देवी-देवता के नजदीक होते गये हैं?

इसलिए व्यक्ति-व्यक्ति के साथ हुई और हो रही बाबा की लीला ही उनकी कथा-गाथा है। हमारे लिए इससे अधिक हितकर, प्रेरक, कल्याणकर और कुछ नहीं है। जितनी ही बाबा की कृपा हमारे साथ है उतने ही हम अन्य योग्य कर्मों में भगवद्-भजन-युक्त प्रणीत हो पाते हैं। यह मेरी अपनी छोटी-समझ है और विश्वास है।

इसी विश्वास के साथ, वैसे तो, पूरे दस वर्षों से परन्तु पिछले तीन-चार वर्षों से मैं सघन रूप से जूझता रहा कि पुस्तक के रूप में बाबा की कथा लीला का कम-से-कम एक छोटा-सा संग्रह भी प्रस्तुत किया जा सके।

2003 ई० से कलना धाम से स्वामी शास्वतजी एवं भाई सुध ाकर जी निरंतर प्रेरित करते रहे और जरूरत व्यक्त करते रहे कि कुछ भी प्रकाशन माध्यम इस दिशा में काम शुरू हो। पाण्डुलिपि तैयार करने की दिशा में बढ़ने की प्रेरणा, साहस और बल अन्ततः इस साल के कलशस्थापन दिन कार्यरूप पकड़ना शुरू किया। सभी से

व्यक्त-अव्यक्त शुभकामना मिलती गई, परन्तु गिरिजा ग्रंथालय के श्री प्रदीप भाई ने गिरिजा पब्लिशिंग हाउस की ओर से अपने समर्पणपूर्ण सहयोग का ज्योंही आश्वासन दिया कि माँ गिरिजा माई की कृपा से एक-एक की संस्तुति मिलती गई एवं श्री विनय कुमार झा उर्फ बबन जी (क्षेत्रीय प्रबंधक, चिल्ड्रेन च्वाइस पब्लिकेशन्स), मुजफ्फरपुर एवं श्री अजय कुमार झा (राजा बाबू)-क्षेत्रीय प्रबंधक, अरविन्द प्रकाशन, पटना ने प्रकाशन की दिशा में सम्पूर्ण मार्ग-दर्शन देते प्रकाशन का सारा जिम्मा अपने कंधों ले लिया। सबों के प्रति भावपूर्ण अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए उचित शब्द मेरे पास नहीं हैं।

प्रकाशन प्रक्रिया में गिरिजा बुक डिपो, चन्द्रलोक चौक, मुजफ्फरपुर समस्त परिवार का समर्पित सहयोग रहा। श्री आलोक कुमार (लल्लू जी), एस०एस० प्रिन्टिंग, मुजफ्फरपुर, के सौजन्य से ही कम्पोजिंग कार्य हुए एवं **श्री आनन्द कुमार**, श्रीं इन्टरप्राइजेज, चुनागली, चन्द्रलोक चौक, मुजफ्फरपुर ने समस्त कम्प्यूटर कम्पोजिंग का काम जिस निष्ठा, समर्पण के साथ किया वह मेरे लिए अविस्मरणीय रहेगा। श्री आनन्द जी को साधुवाद।

-: सेवक :-

अंतर्राष्ट्रीय शोध एवं समन्वय मिशन

गिरिजा-सदन, नरायणपट्टी

पत्रा०-राजनगर, जि०-मधुबनी, बिहार

दूरभाष - 956276240724

लेखक के संबंध में

प्रस्तुत पुस्तक के रचनाकार श्री "मोहन झाजी" का जन्म बिहार के मधुबनी जिलान्तर्गत, 1942 ई० में, नारायणपट्टी ग्राम के एक सम्भ्रांत परिवार में हुआ था। बचपन से ही खोजी मन और प्रतिभासम्पन्न, लेखक के बहुआयामी व्यक्तित्व को जीवन-वृत्ति के ऊहा-पोह नें निखारने और सँवारने का काम किया। लेखक के क्रांतिशील विचार, विवेकशील बुद्धि तथा सामाजिक एवं आध्यात्मिक चेतना का सद्यः-दर्शन इस पुस्तक में समाविष्ट है। बाबा कल्याणेश्वरनाथ महादेव एवं गिरिजा महारानी के उद्कुल बाबा परमहंसजी "कलना-बाबा" के अद्भूत रहस्यों एवं विशमयकारी उनके कृत्यों को अपनी लेखनी से उजागर करके लेखक ने अपने जीवन को सुफल बना दिया है। "कलना-बाबा" की प्रकृति, प्रवृत्ति और निवृत्ति का आख्यान जिस सहज भाव एवं गहन-मन से किया गया है, अप्रतिम और अतुलनीय है।

गिरिजा पब्लिशिंग हाउस

कल्याणेश्वर स्थान, कलना

जिला-मधुबनी (बिहार)

सहयोग राशि-51.00 (इक्यावन रुपये मात्र)

मुद्रक : माँ मिथिला प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स, पटना । मोब. : 9835456370